स्वदेशी पत्रिका

वर्ष–22, अंक–10, आश्विन–कार्तिक 2071, अक्टूबर 2014

संपादक
विक्रम उपाध्याय

कार्यालय
धर्मक्षेत्र, सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022 से प्रकाशित
दूरभाष : 011–26184595
स्वदेशी जागरण समिति की ओर से ईश्वर दास महाजन द्वारा कॉम्पीटेंट बाइन्डर्स (प्रिंटिंग यूनिट), नवीन शाहदरा, दिल्ली–32 से मुद्रित।

आवरण कथा – पृष्ठ–6

जो कहते हैं कि हमें अपने यहां मौजूद गरीबी और बुनियादी सुविधाओं की कमी को देखते हुए अंतरिक्ष कार्यक्रमों पर इतनी राशि खर्च नहीं करनी चाहिए, वे गलत तर्कों का सहारा लेते हैं। अगले 15 सालों में हम अमेरिका और चीन के बाद तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था वाले देश होंगे।

कवर पेज

अनुक्रम

आवरण कथा :
मंगल पर विजय : भारत ने रचा इतिहास
– – डॉ. के. कस्तूरीरंजन /6

दृष्टिकोण
परंपरागत सोच से बाहर आए रिजर्व बैंक
– डॉ. अश्विनी महाजन /8

प्रतिक्रिया
पड़ोसी देश के विकास मॉडल पर न हों मुग्ध
– अरुण तिवारी /10

अभिमत : मेक इन इंडिया की शुरूआत...
– जयंतीलाल भण्डारी /13

कृषि : टिकाऊ खेती की जरूरत
– देविन्दर शर्मा /15

पड़ताल : पंजाब में कर्जग्रस्त किसान कर रहे हैं आत्महत्या
– भारत डोगरा /17

लेख :
स्वदेशी अपनाने से ही देश और हमारा भविष्य सुधरेगा
– वीरेन्द्र काजवे आचार्य /19

विचार–विमर्श : तारीफ, आलोचना के बीच का सच. . .
– आलोक पुराणिक /20

विश्लेषण : नौकरशाही पर भरोसा हानिकारक
– डॉ. भरतझुनझुनवाला /22

समस्या : आपदा प्रबंधन की खामियां
– पंकज चतुर्वेदी /24

पर्यावरण : हमारे सामने दोहरी चुनौती
– सुनीता नारायण /26

सामयिकी
बीमारू राज्यों की बीमारी शिक्षा
– निरंकार सिंह /27

मुद्दा : तिब्बत पर फिर से नहीं दिया गया ध्यान
– ब्रह्मा चेलानी /29

अंतर्राष्ट्रीय : भारत ने अमरीका से क्या पाया...?
– डॉ. वेदप्रताप वैदिक /34

पाठकनामा/4, समाचार परिक्रमा/31, रपट/36

पाठकनामा

स्वच्छ भारत अभियान की तरह बाल मजदूरी खत्म करने का भी हो अभियान

2 अक्टूबर को प्रधानमंत्री ने स्वच्छ भारत अभिमयान की शुरूआत की। उसी प्रकार बाल मजदूरी खत्म करने का भी अभियान होना चाहिए। आज बाल मजदूरी हमारे देश के लिए अभिशाप बन गई है। देश में मजदूर/गरीब के बच्चे अपने माता–पिता की तरह ही मजदूरी करने के लिए विवश है। जिसके कारण बाल मजदूरी भारत में पनप रही है। वैसे देखा जाए कानूनों की हमारे देश में कोई कमी नहीं है। बाल मजदूरी के मामले में भी 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों से काम लेना कानूनन अपराध है और पकड़े जाने पर नियोक्ता को जुर्माना तथा जेल या फिर दोनों हो सकती है लेकिन कड़े कानून के बावजूद भी आज ढाबों से लेकर घरों तक छोटे–छोटे बच्चे नौकर के रूप में काम करते दिखे जा सकते है। सबसे ज्यादा बच्चे ईट भट्ठों या पटाखा फैक्टरियों में खतरनाक हालात में काम कर रहे हैं। बाल मजदूरी करवाने वाले लोगों में कानून का कोई खौफ नहीं हैं। इसलिए प्रत्येक भारतीय को बाल मजदूरी के खिलाफ एक सशक्त आवाज उठानी चाहिए। कहने को हमारे नेता कहते हैं बच्चे कल का भविष्य है तो फिर बाल मजदूरी खत्म करने के लिए एक बड़ा अभियान क्यों नहीं चलाया गया?

– विरेन्द्र सिंह, करतार नगर, गली नं. 12, दिल्ली

कब मिलेगी आम आदमी को छत

आज आम आदमी अपनी मूलभूत संसाधनों को भी नहीं जुटा पा रहा है। दूसरी ओर सभी राज्य सरकारें अपने मुनाफे के बारे में ही सोच रही है। अभी हाल ही में डी.डी.ए ने 25 हजार फ्लैटों की बिक्री जारी की है। कहा जाता है कि डीडीए आम लोगों के लिए मकान बनाता है लेकिन इन फ्लैटों की कीमतों को देखकर तो नहीं लगता कि यह आम लोगों के लिए बने हैं। एक बेडरूम फ्लैट 16 से 20 लाख और दो बेडरूम फ्लैट कीमत 41 लाख से आसपास। आज एक औसत नौकरी करने वाले के लिए इतना पैसा जुटाना काफी मुश्किल है। अगर इस तरह के हालात रहे तो कैसे आम आदमी को छत मिलेगी। **–मनोज कुलियाल, आर.के. पुरम्, दिल्ली**

आवश्यक नहीं कि इस अंक के भीतर प्रस्तुत लेखकों के विचार स्वदेशी पत्रिका के संपादक मंडल के विचारों से मेल खाते हों। पाठकों की जानकारी के लिए उन्हें यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

संपादकीय कार्यालय

''धर्मक्षेत्र'' शिव शक्ति मन्दिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

दूरभाष : 011–26184595 • ई–मेल : swadeshipatrika@rediffmail.com

अगर आप घर बैठे स्वदेशी पत्रिका चाहते हैं तो डिमांड ड्राफ्ट, मनीऑर्डर अथवा चेक द्वारा शुल्क *'स्वदेशी पत्रिका'* दिल्ली के नाम भेजने का कष्ट करें।

वार्षिक सदस्यता शुल्क : 150 रुपए

आजीवन सदस्यता शुल्कः 15,00 रुपए

यदि शुल्क भेजने के उपरांत भी आपको पत्रिका समय पर उपलब्ध नहीं हो पा रही है तो तुरंत पत्रिका कार्यालय को सूचित करें।

या आप सीधे बैंक ऑफ इंडिया, खाता नं. 602510110002740

IFSC : BKID 0006025 (Ramakrishnapuram)

उन्होंने कहा

मंगल यान की कामयाबी सभी भारतीयों के लिए गौरव का क्षण है। हमारे इसरो के वैज्ञानिकों ने यह कारनामा कर दिखाया है। मैं सभी वैज्ञानिकों को बधाई देती हूं और सलाम करती हूँ उनके समर्पण व कठिन परिश्रम को।

– लता मंगेशकर

पाकिस्तान को अपनी नापाक हरतकतें बंद कर देनी चाहिए। उसे समझना होगा कि भारत में अब समय बदल गया है। **– राजनाथ सिंह**

जलवायु परिवर्तन का मुददा सामरिक महत्व का मामला है। सच्चाई यह है कि उचित जानकारी के अभाव में हम अंतर्राष्ट्रीय मोर्चे पर कमजोर पड़ जाते हैं।

– जयराम रमेश

सीरिया ऐसा 14वां देश है जिस पर 1980 के बाद से अमेरिका ने हमला किया है, कब्जा किया है या बमबारी की है। अब अमेरिका का अगला निशाना कौन सा देश होगा?

– ब्रह्मा चेलानी

मेक इन इंडिया' उद्योग और सरकार को एक साथ लाएगा। भारत के पास रणनीतिक तौर पर दो सबसे बड़ी ताकत है। हमारी ह्यूमन कैपिटल और दूसरा हमारा बाजार, जोकि हमारे विकास को रफ्तार देने में सक्षम हैं।

–साइरस मिस्त्री

भारत में बने उत्पाद सभी तरह के वातावरण के अनुकूल हैं। यह किफायती इनोवेटिव डिजाइन को प्रदर्शित करते हैं। मैन्यूफैक्चरिंग सेक्टर की कामयाबी ग्लोबल मार्केट की मांग पूरी करने में है। **– अजीम प्रेमजी**

संपादकीय

विदेशियों की नकल से निजात का समय

विजयदशमी के अवसर पर संघ प्रमुख श्री मोहन भागवत ने देश के सामने दो लक्ष्य रखे। पहला, यह कि कर्ज के आधार पर अब देश न चले और पूरी तरह से आत्मनिर्भर बने। दूसरे, हम चीन में बने हुए सामान का उपयोग न करें। दरअसल यही दोनों बिंदु किसी भी अर्थव्यवस्था को अभेद्य बनाते हैं। अब तक हम पश्चिमी देशों की अंधाधुंध नकल करते आए हैं। ईस्ट इंडिया कम्पनी के जमाने से ही यह प्रवृति हम पर हॉबी रही है। खानपान, रहन–सहन, तकनीक और यहां तक कि पूरी जीवनशैली ही अपनाने के मामले में हम कुछ ज्यादा उदारता दिखाते हैं। यद्यपि हमें इसका खासा खामियाजा भुगतना पड़ा है। कहने की जरूरत नहीं कि विकासशील अर्थव्यवस्था में आत्मनिर्भरता का एक अहम स्थान है। आजादी मिलने के बाद यह खाका बहुत अच्छी तरह से खींचा जा सकता था, मगर तत्कालीन नीतिकारों के दिमाग में विकास का पश्चिमी मॉडल प्रभावी रहा, लिहाजा इस मुद्दे को महत्व नहीं दिया गया। बाद के वर्षों में उदारीकरण ने अपने पैर पसारे तो नई सदी के दस्तक पर बची–खुची कसर चीन ने पूरी कर दी। जहां एक ओर, आधुनिक तकनीक और सस्ते माल की उपलब्धता ने उपभोक्ता बाजार में चीन की धाक जमा दी, वहीं भारत जैसे विकासशील देशों के नीति निर्धारक भी विकास की चाह में चीन के नक्शे कदम पर चलने को मानो विवश हो गए। आश्चर्य की बात यह है कि इस बीच भारत के उद्योगपति भी अपनी निर्माण की इकाईयां चीन में स्थापित करने के प्रति ज्यादा लालायित दिखे। चीन के पास भारत के मुकाबले ऐसी कोई विशेषज्ञता नहीं है, जिससे वह विकास की दौड़ में हमसे आगे निकल सके। सस्ते मजदूर, आसानी से उपलब्ध कच्चा माल, विस्तृत बाजार और घरेलू पूंजी के मापदंड पर भारत कहीं भी उन्नीस नहीं बैठता। फिर भी भारत अपने यहां विदेशी निवेशकों को चीन के मुकाबले लाने में असफल रहा। इसका सबसे बड़ा कारण देश में बीते एक दशक से कोई मजबूत सरकार का न होना रहा है। ढुलमुल नीति और भ्रष्टाचार में आकण्ठ डूबी यूपीए सरकार एक तरह से विदेशी निवेशकों का विश्वास ही खो चुकी थी। तमाम अंतरराष्ट्रीय एजेंसिया भारत को निवेश के लिहाज से जोखिम वाला देश करार दे चुकी थीं। मगर अब राजनैतिक परिदृश्य बदल चुका है और नई सरकार के पक्ष में वोटरों ने अपना जबरदस्त समर्थन व्यक्त किया है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में ठोस और कठोर फैसले का दौर देखा जा सकता है। बड़े विकसित देशों ने मोदी सरकार में जबर्दस्त विश्वास दिखाया है। देश में निवेश का माहौल बनने लगा है। ऐसे में आवश्यक है कि हम अपनी नीतियों को ठीक तरीके से तराशें, पहले की तरह फिर पूंजी निवेश की चाह में मनमाने समझौते पर हस्ताक्षर न कर दें। देश को अब आर्थिक नजरिए से दुनिया के लिए एक मिसाल बनना है, न कि हम उसी पुराने ढर्रे पर चलते रहें, जिसके चलते हमारी यह हालात हुई है। हमारे चेहरे पर यह भाव कतई न व्यक्त होने पाए कि भारत को हर हाल में पूंजी की आवश्यकता है, बल्कि दुनिया भर के निवेशकों के मन में यह भाव आना चाहिए कि उन्हें अब भारत की जरूरत है। 'मेक इन इंडिया' एक दीर्घकालीन कार्यक्रम है, इसलिए पूंजी लगाने वाले इस देश से प्यार करें और अपने उत्पादन की इकाई को हमारे देश में लेकर आएं। संघ प्रमुख द्वारा यह कहना कि हम चीन में बने सामान का उपयोग न करें, 'मेक इन इंडिया' कार्यक्रम को बल देने वाला हैं, क्योंकि उत्पादन हब बनने की सफलता इसी बात में निहित है कि बढ़े हुए उत्पादन की तत्काल बिक्री सुनिश्चत हो सके और साथ ही आगे भी उसकी मांग बनी रहे। वाकई हमारे उपभोक्ता भारतीय उत्पादों का इस्तेमाल करने की ठान लें तो देश की आर्थिक गति हवा से बातें करने लगेगी, इसमें संदेह नहीं कि बीते डेढ़ दशकों से भारतीय बाजार में चीनी उत्पादों का खासा इस्तेमाल होने लगा है। वास्तव में यह प्रवृति चीन को आर्थिक मोर्चे पर ताकतवर बनाती है तो भारत कमजोर। आज वैश्विक उपभोक्ताओं की भीड़ में भारतीयों की बड़ी जमात दुनिया के लिए आकर्षण का बिंदु है। इस स्थिति का आर्थिक लाभ भारत को मिले या चीन को, यह भारतीयों को तय करना है। सवाल भारत को सशक्त बनाने का है, ऐसे में देखा जाए तो ये दोनों लक्ष्य हम भारतीय आसानी से हासिल कर सकते हैं। बस हमें जरूरत है तो आत्मबल की और देशहित पर सोचने की। निष्कर्ष के रूप में हमें कहना प्रासंगिक लगता है कि भारतीयों को अब तो विदेशी नकल करने से आदत से उबरना होगा और देखा जाए तो इसके लिए सटीक समय भी यही है। शायद इसी आशय की अपील करते हुए संघ प्रमुख श्री मोहन भागवत नागपुर में दिखाई दिए।

आवरण कथा

मंगल पर विजय : भारत ने रचा इतिहास

जो कहते हैं कि हमें अपने यहां मौजूद गरीबी और बुनियादी सुविधाओं की कमी को देखते हुए अंतरिक्ष कार्यक्रमों पर इतनी राशि खर्च नहीं करनी चाहिए, वे गलत तर्कों का सहारा लेते हैं। अगले 15 सालों में हम अमेरिका और चीन के बाद तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था वाले देश होंगे। बेशक देश को संपन्नता चाहिए लेकिन आर्थिक तौर पर शक्तिशाली देश होने के लिए जरूरी है कि देश बाकी क्षेत्रों में भी ताकतवर हो।

चौबीस सितम्बर का इंतजार भारत ही नहीं, दुनिया के सभी देशों को बेसब्री से था। मंगल मिशन की हमारी देश की कामयाबी को लेकर एक अंदेशा था लेकिन उम्मीद उस पर भारी थी। मन के किसी कोने में यह विश्वास था कि हम कामयाब होंगे और ऐसा ही हुआ। यह दिन भारत ही नहीं, दुनिया के लिए अविस्मरणीय रहा। हमारा मंगल यान मंगल ग्रह की कक्षा में कामयाबीपूर्वक प्रवेश कर चुका है। पूरे देश के लिए यह एक कालजयी घटना है। हम गर्व से कह सकते हैं कि भारत ने उस श्रेणी में एकमात्र देश के रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज करवा ली है जिसने पहली ही कोशिश में ऐसा कारनामा कर दिखाया।

मंगलयान की सफलता उन 24 मिनटों पर निर्भर थी जिसमें यान में मौजूद इंजन को स्टार्ट किया जाना था। दरअसल मंगलयान की गति को धीमी करना थी ताकि यान मंगल ग्रह के गुरुत्वाकर्षण में खुद–ब–खुद खींचकर उसकी कक्षा में स्थापित हो जाए। यह हमारे लिए गर्व की बात है कि हमने जैसा चाहा वैसा ही हुआ। इसके लिए इसरो से जुड़े वैज्ञानिकों की जितनी तारीफ की जाए, कम है। उन लोगों की भी तारीफ की जानी चाहिए जिन्होंने इस अभियान को किसी न किसी रूप में सहयोग किया।

■ **डॉ. के. कस्तूरीरंजन**
(पूर्व प्रमुख, इसरो)

मंगलयान की कामयाबी का यह समय तालियां बजाने का है, जश्न मनाने का है। इस अभियान की सफलता के लिए

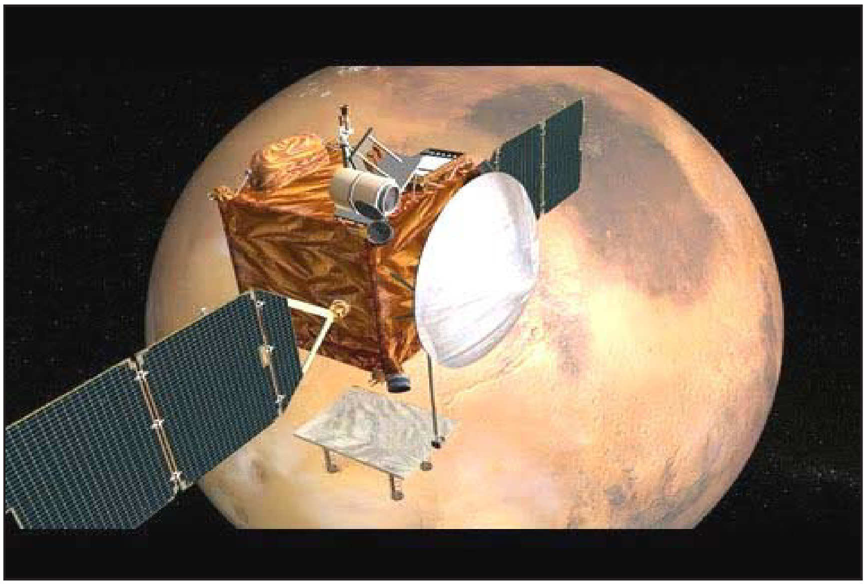

पिछले दस महीनों से दो सौ वैज्ञानिक रात–दिन काम कर रहे थे। मंगल यान पिछले साल नवम्बर में मंगल यान सफलतापूर्वक लांच किया गया था। उससे पहले भी वैज्ञानिकों को दिन–रात एक करना पड़ा। शानदार बात यह भी है कि हमने यह पूरा काम अब तक सबसे कम बजट में किया। नासा के अभियान हमारे अभियान से काफी महंगे रहे हैं। हमारी लागत 450 करोड़ रुपए है जो नासा के अभियान का दसवां हिस्सा है।

जो कहते हैं कि हमें अपने यहां मौजूद गरीबी और बुनियादी सुविधाओं की कमी को देखते हुए अंतरिक्ष कार्यक्रमों पर इतनी राशि खर्च नहीं करनी चाहिए, वे गलत तर्कों का सहारा लेते हैं। अगले 15 सालों में हम अमेरिका और चीन के बाद तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था वाले देश होंगे। बेशक देश को संपन्नता चाहिए लेकिन आर्थिक तौर पर शक्तिशाली देश होने के लिए जरूरी है कि देश बाकी क्षेत्रों में भी ताकतवर हो।

याद रखिए कि चाहे रणनीतिक क्षमता हो या खेतीबाड़ी का मामला, राष्ट्रीय सुरक्षा हो या बेहतर जीवन स्तर का मसला– सभी चीजें विज्ञान और उन्नत

तकनीक के इस्तेमाल से ही निखरती हैं। हमें इस रूप में विज्ञान की अहमियत समझनी होगी।

यह समझना होगा कि अंतरिक्ष कार्यक्रम सिर्फ ब्रह्मांड के रहस्यों से परदा हटाना नहीं बकि वह जरिया है जिससे विकास के अन्य पहलुओं को भी लाभ होता है। फिर हमारी तकनीक सबसे सस्ती है। हमने अपनी जरूरतों के आधार पर कम पैसे में ज्यादा कामयाबी हासिल करने थी। यह महत्वपूर्ण तकनीक हमने विकसित कर ली है। भारतीय वैज्ञानिकों को इसके लिए भी शाबाशी मिलनी चाहिए। हमारी सस्ती तकनीक को देखते हुए आगे संभव है कि दूसरे देश इसका लाभ लेना चाहें। हमारे द्वारा उनके लिए उपग्रह निर्माण के रास्ते खुलेंगे और इसका एक व्यावसायिक पक्ष भी होगा। हमारा मंगल मिशन एक विशाल परियोजना रही है। विश्व प्रोद्यौगिकी के विकास की प्रक्रिया में अपनी भूमिका बढ़ाने की इच्छा रखने वाले दुनिया के कई दूसरे देशों की तरह हम भी अंतरिक्ष अनुसंधानों की ओर अपना फोकस बढ़ा रहे हैं।

दरअसल उच्च प्रौद्योगिकी संपन्न महाशक्तियों के बीच खड़े होने के लिए राष्ट्रीय अंतरिक्ष अभियान का होना बहुत जरूरी है। हमारा मंगल मिशन खगोलीय खोज कार्यक्रम का तार्किक विस्तार रहा है। हमने दुनिया के सामने किफायती मॉडल पेश कर दिया है। हमने अंतरराष्ट्रीय कार्यक्रम में साझेदार बनने की योग्यता हासिल कर ली है। भविष्य में जब मंगल से जुड़े मानवयुक्त या अन्य महत्वपूर्ण मिशन पर अमल होगा तो निश्चित ही भारत नियंत्रण समुदाय का हिस्सा होगा।

ऐसा स्वाभाविक तौर पर होगा क्योंकि हमने दिखा दिया है कि मंगल पर फतह करना हमारे वश की बात है। फिर यह याद रखने की जरूरत है कि हम अंतरिक्ष कार्यक्रम पर बजट का केवल शून्य दशमलव 34 ही खर्च करते हैं। और इसका भी अधिकांश हिस्सा दूरसंचार, दूरसंवेदी और दिशासूचक उपग्रहों के निर्माण पर खर्च हो जाता है। मंगल मिशन की बात करें तो इस बजट की भी केवल आठ प्रतिशत राशि इस निर्मित्त खर्च की गई। इस छोटी सी राशि को खर्च करने के कई फायदे हैं जिसका सूक्ष्मता से विश्लेषण करें तो विरोधियों की बोलती बंद हो जाएगी।

आज आपदा प्रबंधन से लेकर प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग तक में अंतरिक्ष अभियानों से फायदा पहुंचता है। आप सोचें कि केवल यह पता लग जाए कि आगे का मौसम कैसा रहेगा तो हम हर साल अरबों रपए के नुकसान से बच सकते हैं। यह नुकसान आपदाओं के रूप में तकरीबन हर साल सामने आता है। इस मामले में यह कहना कि भारत और चीन के बीच स्पेस रेस (अंतरिक्ष प्रतिस्पर्धा) कायम है, गलत होगा। हमें समझना चाहिए कि हर देश की अपनी अलग प्राथमिकता होती है। अंतरिक्ष अभियान की शुरुआत से ही भारत का लक्ष्य मूलभूत स्पेस अप्लीकेशन पर काम करना है। इस काम में भारत रोल मॉडल रहा है। जहां तक चीन की बात है, उसकी अपनी प्राथमिकताएं हैं। हम दूसरे के साथ दौड़ नहीं लगा रहे हैं। हमारी प्रतिस्पर्धा अपने आप से है कि कैसे निरंतर नई कामयाबी हासिल की जाए।

भारत से पहले यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी, अमेरिका और रूस मंगल पर उपग्रह भेज चुके हैं लेकिन सफल अभियान से पहले तीनों ने असफलता का मुंह देखा। चीन की बात करें तो 2011 में चीन का मंगल अभियान यंगहाउ–1 असफल रहा। इसी तरह जापान का मंगल अभियान 1998 में शुरू हुआ जो ईंधन की कमी के कारण असफल रहा। नासा 2016 में इनसाइट नाम से लैंडर मिशन मंगल पर भेजना चाहता है, ताकि वहां की अंदरूनी सतह की बनावट का खुलासा हो सके। रशियन फेडरल स्पेस एजेंसी और यूरोपियन स्पेस एजेंसी इस साल मंगल पर उपग्रह भेजने की जुगत में हैं। अगले चार सालों में ये दोनों वहां रोवक भेजने की तैयारी भी कर रहे हैं। रूसी अंतरिक्ष विज्ञानियों का मकसद तो मंगल पर कई मौसम केंद्रों का नेटवर्क बनाकर उस ग्रह के खास वायुमंडल की बारीकियां समझना है। अभी मंगल पर दो मिशन रोवर अपॉच्युरुनिटी और क्यूरॉसिटी मौजूद हैं। नासा के ये दो दोनों रोबोयान मंगल पर जीवन और पानी की मौजूदगी के संकेत खोज रहे हैं।

भारत के मंगल अभियान का भी एक मकसद जीवन की खोज से जुड़ा है। लेकिन इसका असल मकसद है यहां पर मीथेन गैस की मौजूदगी का पता लगाना। मंगलयान यह जानकारी भी जुटाएगा कि उस ग्रह के गर्भ में खनिज हैं या नहीं। साथ ही वहां बैक्टीरिया की मौजूदगी है या नहीं इसका भी पता वह लगाएगा। हमारा मानना है विज्ञान और प्राद्यौगिकी जीवन को सार्थक और सहज बनाते हैं। मंगल मिशन को भी इसी परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए। विश्व में धाक जमाने जैसी बात नहीं होनी चाहिए। यह क्षेत्र ऐसा है जहां प्रतिस्पर्धा की नहीं सहयोग की जरूरत रही है। हम दुनिया का सहयोग लेने और सहयोग करने के आकांक्षी हैं। ❑

दृष्टिकोण

परंपरागत सोच से बाहर आए रिजर्व बैंक

कुछ अपवाद छोड़ दें तो, पिछले तीन वर्षों से अधिक समय से भारतीय रिजर्व बैंक ने देश में ब्याज दरों को या तो बढ़ाया है या पूर्ववत रखा है। पिछले मास के अंत में भी पुनः मुद्रा स्फीति की चिंताओं को मद्देनजर रखते हुए, रिजर्व बैंक ने ब्याज दरों को घटाने की संभावनाओं को नकार दिया है। आज देश की अर्थव्यवस्था एक अत्यंत मुश्किल दौर से गुजर रही है। यह सही है कि यूपीए के पिछले दस वर्षों के शासनकाल के दौरान हुए कुप्रबंधन के कारण न केवल मुद्रास्फीति बढ़ी बल्कि रूपए की भी भारी बदहाली हुई।

■ डॉ. अश्विनी महाजन

भारत सरकार द्वारा हाल ही में एक प्रयास शुरू हुआ है, जिसके अनुसार आने वाले समय में देश में ब्याज दरों को निर्धारित करने का काम केन्द्र सरकार कर सकती है। यह एक बड़ा बदलाव होगा, क्योंकि वर्तमान में देश में ब्याज दरें निर्धारित करने का काम भारतीय रिजर्व बैंक का है। हालांकि जनता द्वारा बैंकों में जमा की गई राशियों चाहे वो बचत खाता हो या फिक्सड डिपोजिट या कोई और, पर कितना ब्याज दिया जाएगा या बैंकों द्वारा दिए जा रहे ऋणों पर कितना ब्याज लगेगा, मोटेतौर पर संबंधित बैंक तय कर सकते हैं, लेकिन मौलिक ब्याज दरों को निर्धारित करने का काम रिजर्व बैंक ही करता है। नीतिगत रूप से रिजर्व बैंक द्वारा बैंक दर, रेपो दर तथा रिवर्स रेपो दर निर्धारित की जाती है। उसी तर्ज पर प्राईम लैंडिंग रेट भी निर्धारित होता है। आजकल रेपोरेट और रिवर्स रेपोरेट में बदल के माध्यम से रिजर्व बैंक ब्याज दरों में परिवर्तन प्रभावी करता है।

यदि कुछ अपवाद छोड़ दें तो, पिछले तीन वर्षों से अधिक समय से भारतीय रिजर्व बैंक ने देश में ब्याज दरों को या तो बढ़ाया है या पूर्ववत रखा है। पिछले मास के अंत में भी पुनः मुद्रा स्फीति की चिंताओं को मद्देनजर रखते हुए, रिजर्व बैंक ने ब्याज दरों को घटाने की संभावनाओं को नकार दिया है। आज देश की अर्थव्यवस्था एक अत्यंत मुश्किल दौर से गुजर रही है। यह सही है कि यूपीए के पिछले दस वर्षों के शासनकाल के दौरान हुए कुप्रबंधन के कारण न केवल मुद्रास्फीति बढ़ी बल्कि रूपए की भी भारी बदहाली हुई। और रूपया अपने ऐतिहासिक निम्न स्तर 68.84 रूपए प्रति डालर पर पहुंच गया था। 2013–14 में मैन्युफैक्चरिंग की ग्रोथ दर ऋणात्मक 0.7 प्रतिशत तक आ पहुंची और इस वर्ष की दोनों तिमाहियों में भी उसमें कोई सुधार नहीं हुआ है। मैन्युफैक्चरिंग क्षेत्र भारी ब्याज के बोझ से दबा हुआ अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा का सामना नहीं कर पा रहा है और लगातार गिरता औद्योगिक उत्पादन भीषण चिंता का विषय बना हुआ है।

रिजर्व बैंक द्वारा ब्याज दरों को न घटाने के पीछे दो तर्क दिये जाते हैं। एक, ब्याज दर घटने से उधारी की मांगी बढ़ेगी और मुद्रा स्फीति और अधिक जटिल हो सकती है। दूसरे, जनता को बैंकों के पास जमा रखने हेतु प्रेरित करने के लिए यह जरूरी है कि ब्याज दर मुद्रा स्फीति से ज्यादा हो। यानि वास्तविक ब्याज दर (ब्याज दर–मुद्रास्फीति) धनात्मक हो। ब्याज दरों को घटाने से वास्तविक ब्याज दर ऋणात्मक हो सकती है, जिससे बैंक के पास तरलता का संकट भी आ सकता है।

औद्योगिक उत्पादन पर भारी असर

रिजर्व बैंक के तर्कों को सही भी मान लिया जाये, तो भी यह बात सच है कि ऊंची ब्याज दरों के चलते आज देश में औद्योगिक उत्पादन पर भारी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। यह मात्र संयोग ही नहीं है कि औद्योगिक उत्पादन की ग्रोथ जो 2007–08 में 15 प्रतिशत से ज्यादा थी 2011–12 में मात्र 2.8 प्रतिशत, 2012–13 में 1 प्रतिशत और 2013–14 में तो –0.7 (ऋणात्मक) प्रतिशत तक पहुंच गई। सितंबर माह में एच.एस.बी.सी. द्वारा प्रकाशित पी.एम.आई (परचेजिंग मैनेजर इंडेक्स) पिछले माह 52.4 से घटकर 51.0 तक पहुंच गया है। गौरतलब है कि ये आंकड़े फैक्टरी उत्पादन के रोके तक के तौर पर माने जाते हैं। पिछले साल फैक्टरी उत्पादन घटना और 2014–15 के पहले 6 महीनों में भी ढलाव की स्थिति का जारी रहना, वास्तव में देश की अर्थव्यवस्था के लिए कोई शुभ संकेत नहीं है।

कैसे होगा पूरा 'मेक ईन इंडिया' का सपना

यह सच है कि कुछ साल पहले तक भारत में औद्योगिक उत्पादन की बढ़ने की गति अच्छी रही, लेकिन यह उत्पादन हर क्षेत्र में एक जैसा नहीं बढ़ा। आटो मोबाईल, इस्पात, सीमेंट आदि के अतिरिक्त कई क्षेत्राों में हमारे औद्योगिक उत्पादन को धक्का भी लगा। इलैक्ट्रिकल, इलैक्ट्रोनिक्स, टेलीकॉम, कम्प्यूटर, और यहां तक कि खिलौनों का उत्पादन भी देश में अधिक नहीं बढ़ा और देश की निर्भरता आयातों पर बढ़ती बई। 2000–01 के बाद इलैक्ट्रिकल्स, इलैक्ट्रॉनिक्स, टेलीकॉम और कम्प्यूटर संबंधित वस्तुओं का आयात 211000 करोड़ रूपए बढ़ गया। हमारे कई उद्योग चीन को स्थानांतरित हो गए और आलम यह है कि चीन से हमारा व्यापार घाटा 2012–13 में 41 अरब डालर तक पहुंच गया।

इस चिंता के मद्देनजर प्रधानमंत्री, नरेन्द्र मोदी ने लाल किले की प्राचीर से 'मेक इन इंडिया' और 'मेड इन इंडिया' का नारा दिया है। लेकिन प्रधानमंत्री द्वारा मात्र नारा देने से यह स्थान पूरा होने वाला नहीं है। इसके लिए समुचित प्रयास भी करने होंगे। और उन प्रयासों में ब्याज की लागत को घटाना बहुत जरूरी है।

घटता औद्योगिक उत्पादन यह बताता है कि हमारे उद्योगों के पास अप्रयुक्त क्षमता है। मांग के अभाव में फैक्टरियों में उत्पादन नहीं बढ़ पा रहा है। उधर फैक्टरी उत्पादन न बढ़ाने के लिए कार्यशील पूंजी की भी जरूरत होगी। ऊंची ब्याज दरों के चलते न तो मांग बढ़ सकेगी और न ही उत्पादन में ब्याज लागत कम हो सकेगी। औद्योगिक उत्पादन को बढ़ाने से मुद्रा स्फीति पर भी काबू पाया जा सकता है, जिससे ब्याज दरों को और घटाने की संभावनायें बन सकती है।

ग्रोथ के लिए जरूरी है नीची ब्याज दरें

यह खुला सत्य है कि 1998, जब पहली एन.डी.ए. सरकार बनी थी, से पहले आर्थिक ग्रोथ की दर कभी 4–5 प्रतिशत से ज्यादा नहीं हो पाई थी। लेकिन 1998–2004 के कालखंड में लगातार घटती ब्याज दरों का यह असर हुआ कि ग्रोथ दर लगातार बढ़ती हुई 2003–04 तक 8.5 प्रतिशत पहुंच गई। यह गति आगे भी जारी रही, लेकिन बढ़ती ब्याज दरों ने ग्रोथ दर को दुबारा 4 से 5 प्रतिशत पहुंचा दिया है। देश का औद्योगिक क्षेत्र ही नहीं, इन्फ्रास्ट्रक्चर और सेवा क्षेत्र भी बढ़ती ब्याज दरों के कारण प्रभावित हो रहा है। सरकार द्वारा प्रायोजित कई पीपीपी (पब्लिक प्राईवेट पार्टनरशिप) परियोजनाओं में तो एक भी निविदा प्राप्त नहीं हो पाई है। पिछले कुछ सालों से इंफ्रास्ट्रक्चर का विकास थम गया है। न तो सड़कें और पुल बन पा रहे हैं और न ही कोई अन्य इन्फ्रास्ट्रक्चर। सरकार द्वारा गारंटी देने पर ही एयरपोर्ट या अन्य कोई परियोजनायें शुरू हो पा रही हैं। एनडीए के समय में सड़कों का निर्माण इसलिए हो पाया था क्योंकि निजी उद्यमियों को सस्ते ब्याज पर ऋण मिल रहा था।

परंपरागत सोच से बाहर आना होगा

रिजर्व बैंक मुद्रा स्फीति आधारित ब्याज दर निर्धारण की प्रक्रिया की परंपरागत सोच से बाहर नहीं आ पा रहा। रिजर्व बैंक के तर्क कितने भी सही क्यों न हों, तो भी वर्तमान परिस्थिति की गंभीरता एक अलग प्रकार की नीति अपनाने की बाध्यता की ओर इंगित कर रही है। दुनिया भर में अब परंपरागत मौद्रिक नीतियां अपनाई जा रही हैं। अमरीका की मात्रात्मक ढील (क्वानटेटिव इंजिंग) की मौद्रिक नीति भी उसी अपरंपरागत सोच का उदाहरण है। ऐसे में देश में ग्रोथ की संभावनाओं को पुष्ट करने हेतु ब्याज दरों में कमी उसी प्रकार की एक अपरंपरागत नीति होगी। अपेक्षा की जा सकती है कि सरकार द्वारा रिजर्व बैंक से ब्याज दर निर्धारित करने के अधिकार को अपने पास लेने के पीछे भी कुछ इसी प्रकार की मंशा होगी। वास्तव में ब्याज दर घटने से आपूर्ति में भी वृद्धि संभव होगी, जो मुद्रा स्फीति को कम करेगी। ❑

प्रतिक्रिया

पड़ोसी देश के विकास मॉडल पर न हों मुग्ध

कई सर्वे बताते हैं कि चीनी सामाजिक परिवेश में तनाव गहराता जा रहा है। अमेरिका की गैलप नाम अग्रणी सर्वे एजेंसी के मुताबिक, दुनिया के खुशहाल देशों की सूची में भारत, चीन से 19 पायदान ऊपर है। भारत के 19 प्रतिशत लोग अपने रोजमर्रा के काम और तरक्की से खुश हैं, तो चीन में मात्र नौ प्रतिशत। जनवरी, 2013 से अगस्त, 2013 के आठ महीनों में करीब 50 दिन ऐसे आए, जब चीन के किसी न किसी हिस्से में कुदरत का कहर बरपा।

■ अरुण तिवारी

निवेशक चाहे चीन हो, जापान हो या अमेरिका प्रत्येक अपने मुनाफे के लिए ही निवेश करता है। इसी तरह इस बात से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि निवेशकों में होड़ तभी होती है, जब निवेश करना सुरक्षित हो और मुनाफा पर्याप्त। संभवतः इस दृष्टि से दुनिया आज भारत को सबसे मुफीद देशों में से एक मान रही है। निर्णय लेने और उसे लागू कराने में सक्षम प्रधानमंत्री की नरेंद्र मोदी की छवि, निस्संदेह निवेशकों को आकर्षित करने में मददगार है। इसीलिए यह होड़ है। चूंकि हम निवेश के भूखे हैं, अतः इस होड़ को लेकर हमारी खुशी स्वाभाविक है। किंतु इस खुशी में हम यह कभी न भूले कि जिस तरह जरूरत से ज्यादा किया गया भोजन जहर है, ठीक इसी तरह किसी भी संज्ञा या सर्वनाम का जरूरत से ज्यादा किया गया दोहन भी एक दिन जहर ही साबित होता है। चीन अपनी धरती पर यही कर रहा है। भारत अपने यहां यह न होने दे।

आज चीन भारत में निवेश करे, किंतु द्विपक्षीय सहमत शर्तों पर। अभी–अभी गंगा जलमार्ग हेतु भारतीय अंतर्देशीय जलमार्ग प्राधिकरण द्वारा जारी विज्ञापन में कहा गया है कि परामर्शदाताओं का चयन, रोजगार आदि विश्व बैंक उधारदाताओं के निर्देशों के अनुसार होगा। यह न हो।

यह भी न हो कि निवेशकों की शर्त पर चलते–चलते भारत सरकार भी निवेशक जैसी हो जाए – परियोजनाओं में वह भी सिर्फ लाभ ही देखें और सभी का शुभ भूल जाए। पारंपरिक रूप में भारतीय व्यापारी, लाभ के साथ शुभ का गठजोड़ बनाकर व्यापार करता रहा है। 'शुभ–लाभ' का यह गठजोड़ सरकार कभी न टूटने दे। यह इसलिए कहना पड़ रहा है कि भारत भी अब उसी नियंत्रण होड़ में शामिल होता दिखाई दे रहा है, जिसमें चीन और अमेरिका हैं। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने चीन की बराबरी करने की इच्छा भी जाहिर की है।

वर्तमान सरकार को एक बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि भारतीय विकास का भावी मॉडल चाहे जो हो, वह चीन सरीखा तो कतई नहीं हो सकता। चीनी अर्थव्यवस्था का मॉडल घटिया चीनी सामान की तरह है, जिसका उत्पादन, उत्पादनकर्ता, उपलब्धता और बिक्री बहुत है, किंतु टिकाऊपन की गारंटी न के बराबर। चीन आर्थिक विकास की आंधी में बहता एक ऐसा राष्ट्र बन गया है, जिसे दूसरे के पैसे और जमीन पर कब्जे की चिंता है, अपनी तथा दूसरे की जिंदगी व सेहत की चिंता कतई नहीं। खुद चीन के कारनामे यह संदेश दे रहे हैं।

यह सच है कि चीन ने अपनी आबादी को बोझ समझने की बजाय एक संसाधन मानकर बाजार के लिए उसका उपयोग करना सीख लिया है। यह बुरा नहीं है। ऐसा कर भारत भी आर्थिक विकास सूचकांक पर और आगे दिख सकता है। किंतु समग्र विकास के तमाम अन्य मानकों की अनदेखी करके यह

वर्तमान सरकार को एक बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि भारतीय विकास का भावी मॉडल चाहे जो हो, वह चीन सरीखा तो कतई नहीं हो सकता। चीनी अर्थव्यवस्था का मॉडल घटिया चीनी सामान की तरह है, जिसका उत्पादन, उत्पादनकर्ता, उपलब्धता और बिक्री बहुत है, किंतु टिकाऊपन की गारंटी न के बराबर। चीन आर्थिक विकास की आंधी में बहता एक ऐसा राष्ट्र बन गया है, जिसे दूसरे के पैसे और जमीन पर कब्जे की चिंता है, अपनी तथा दूसरे की जिंदगी व सेहत की चिंता कतई नहीं।

करना खतरनाक होगा। त्रासदियों के आंकड़े बताते हैं कि आर्थिक दौड़ में आगे दिखता चीन प्राकृतिक समृद्धि, सेहत और सामाजिक मुस्कान के सूचकांक में काफी पिछड़ गया है।

कई सर्वे बताते हैं कि चीनी सामाजिक परिवेश में तनाव गहराता जा रहा है। अमेरिका की गैलप नाम अग्रणी सर्वे एजेंसी के मुताबिक, दुनिया के खुशहाल देशों की सूची में भारत, चीन से 19 पायदान ऊपर है। भारत के 19 प्रतिशत लोग अपने रोजमर्रा के काम और तरक्की से खुश हैं, तो चीन में मात्र नौ प्रतिशत। जनवरी, 2013 से अगस्त, 2013 के आठ महीनों में करीब 50 दिन ऐसे आए, जब चीन के किसी न किसी हिस्से में कुदरत का कहर बरपा। औसतन एक महीने में छह दिन! बाढ़, बर्फबारी, भयानक लू, जंगल की आग, भूकंप, खदान धंसान और टायफून आदि के रूप में आई कुदरती प्रतिक्रिया के ये संदेश कतई ऐसे नहीं हैं कि इन्हें नजरंदाज किया जा सके। खासतौर पर तब, जब उत्तराखंड और कश्मीर के जलजले के रूप में ये संदेश अब भारत में भी आने लगे हैं। सिर्फ छह जनवरी, 2013 की ही तारीख को लें तो चीन में व्यापक बर्फबारी से साढ़े सात लाख लोगों के प्रभावित होने का आंकड़ा

है। प्रदूषण की वजह से चीन की 33 लाख हेक्टेयर भूमि खेती लायक ही नहीं बची। ऐसी भूमि में उत्पादित फसल को जहरीला करार दिया गया है। तिब्बत को वह 'क्रिटिकल जोन' बनाने में लगा ही हुआ है। खबर है कि अपने परमाणु कचरे के लिए वह तिब्बत को 'डंप एरिया' के तौर पर इस्तेमाल कर रहा है। तिब्बत से नदियों में बहकर आने पर यह परमाणु कचरा उत्तर–पूर्व भारत को बीमार ही करेगा।

कई विकसित कहे जाने वाले देश भी स्वयं को बचाने के लिए ज्यादा कचरा फेंकने वाले उद्योगों को दूसरे ऐसे देशों में ले जा रहे हैं, जहां प्रति व्यक्ति आय कम है। क्या चीन जैसी मलिन अर्थव्यवस्था में तब्दील हो जाने की हमारी बेसब्री उचित है? गौरतलब है कि जिस चीनी विकास की दुहाई देते हम नहीं थक रहे, उसी चीन के बीजिंग, शंघाई और ग्वांगझो जैसे नामी शहरों के बाशिंदे प्रदूषण की वजह से बड़े पैमाने पर गंभीर बीमारियों के शिकार बन रहे हैं। चीन के गांसू प्रांत के लांझू शहर पर औद्योगीकरण इस कदर हावी है कि लांझू चीन के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में शुमार हो गया है।

इसी वर्ष 11 अप्रैल की ही घटना चीन की है जब लांझू शहर को आपूर्ति किया जा रहा पेयजल इतना जहरीला पाया गया कि आपूर्ति ही रोक देनी पड़ी। आपूर्ति जल में बेंजीन की मात्रा सामान्य से 20 गुना अधिक पाई गई। यानी एक लीटर पानी में 200 मिलीग्राम! बेंजीन की इतनी अधिक मात्रा सीधे–सीधे कैंसर को अपनी गर्दन पकड़ लेने के लिए दिया गया न्योता है। प्रशासन ने आपूर्ति रोक जरूर दी, लेकिन इससे आपूर्त्ति के लिए जिम्मेदार 'विओलिया वाटर' नामक ब्रितानी कंपनी की जिम्मेदारी पर सवालिया निशान छोटा नहीं हो जाता। भारत के लिए इस निशान पर गौर करना बेहद जरूरी है।

कई विकसित कहे जाने वाले देश भी स्वयं को बचाने के लिए ज्यादा कचरा फेंकने वाले उद्योगों को दूसरे ऐसे देशों में ले जा रहे हैं, जहां प्रति व्यक्ति आय कम है। क्या चीन जैसी मलिन अर्थव्यवस्था में तब्दील हो जाने की हमारी बेसब्री उचित है? गौरतलब है कि जिस चीनी विकास की दुहाई देते हम नहीं थक रहे, उसी चीन के बीजिंग, शंघाई और ग्वांगझो जैसे नामी शहरों के बाशिंदे प्रदूषण की वजह से बड़े पैमाने पर गंभीर बीमारियों के शिकार बन रहे हैं। चीन के गांसू प्रांत के लांझू शहर पर औद्योगीकरण इस कदर हावी है कि लांझू चीन के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में शुमार हो गया है।

गौरतलब है कि यह वही विओलिया वाटर है, जिसकी भारतीय संस्करण बनी 'विओलिया इंडिया' नागपुर नगर निगम और दिल्ली जल बोर्ड के साथ हुए करार के साथ ही विवादों के घेरे में है। यदि चीन जैसे सख्त कानून वाले देश में 'विओलिया वाटर' जानलेवा पानी की आपूर्त्ति करके भी कायम है, तो इससे 'पीपीपी' मॉडल में भ्रष्टाचार की पूरी संभावना की मौजूदगी का सत्य स्थापित होता ही है।

अतः कम से कम बुनियादी ढांचागत क्षेत्र के विकास व बुनियादी जरूरतों की पूर्ति वाले सेवाक्षेत्र में यह मॉडल नहीं अपनाया जाना चाहिए। निजी कंपनी का काम मुनाफा कमाना होता है। वह कमाएगी ही। 'कॉरपोरेट सोशल रिस्पॉन्सबिलिटी' का कानूनी प्रावधान भले ही हो, बावजूद इसके 'शुभ लाभ' की जगह 'अधिकतम लाभ' के इस मुनाफाखोर युग में किसी कंपनी से कल्याणकारी निकाय की भूमिका निभाने की अपेक्षा करना गलत है। एक कल्याणकारी राज्य में नागरिकों की बुनियादी जरूरतों की पूर्ति सरकार की जिम्मेदारी होती है। इसे सरकार को ही निभाना चाहिए। जरूरत प्राकृतिक संसाधनों के व्यावसायीकरण से होने वाले मुनाफे में स्थानीय समुदाय की हिस्सेदारी के प्रावधान करने से ज्यादा, प्राकृतिक संसाधनों का शोषण रोकने की है। प्राकृतिक संसाधनों का हमारे रोजगार, आर्थिक विकास दर और हमारे होठों पर स्थाई मुस्कान से गहरा रिश्ता है। इस रिश्ते की गुहार यह है कि अब भारत 'प्राकृतिक संसाधन समृद्धि विकास दर' को घटाए बगैर, आर्थिक विकास दर बढ़ाने वाला मॉडल चुने। चीन के विकास मॉडल की नकल विनाशकारी हो सकती है। ❑

:: सदस्यता संबंधी सूचना ::

मान्यवर,,

स्वदेशी पत्रिका आज देश में चल रहे स्वदेशी आंदोलनों का स्थापित प्रतीक बन चुकी है। पिछले कई वर्षों से स्वदेशी पत्रिका ने असंगत एवं एकतरफा वैश्वीकरण, जनविरोधी आर्थिक उदारीकरण के विरोध एवं वैकल्पिक और रचनात्मक स्वदेशी आंदोलन के पक्ष में एक सक्रिय प्रहरी के नाते हमेशा आपको जागरूक बनाया है एवं आपसे संवाद स्थापित किया है। विगत कालखंड में इन सभी मुद्दों पर हमें आप जैसे सजग पाठकों का अपेक्षित सहयोग भी मिलता रहा है और भविष्य में भी मिलेगा ऐसा, विश्वास है।

आपसे आग्रह है कि स्वदेशी पत्रिका की आपकी सदस्यता अवधि यदि समाप्त हो गई हो तो कृपया पिछले समय से आगामी वर्ष तक की राशि धनादेश (मनीआर्डर), चेक एवं मांग पत्र (डिमांड ड्राफ्ट) के माध्यम से शीध्र भेजने की कृपा करें। पत्रिका के लिफाफे के उपर चिपकाए गए पते की प्रथम पंक्ति में सदस्यता अवधि अंकित है। आप अपनी सदस्यता राशि ''स्वदेशी पत्रिका'' के नाम पत्रिका के कार्यालय के पते पर भेज सकते हैं। सदस्यता अद्यतन न हो पाने की स्थिति में वित्तीय कारणों से पत्रिका आगे जारी रखना कठिन होगा।

सदस्यता शुल्क निम्न प्रकार है :—

स्वदेशी पत्रिका	वार्षिक	आजीवन
हिन्दी	150 रुपए	1500/— रुपए
अंग्रेजी	150 रुपए	1500/— रुपए

हमें आपका सहयोग स्वदेशी आंदोलन को राष्ट्रव्यापी एवं जनोन्मुखी बनाने में प्रमुख भूमिका निभाएगा। कृपया स्वदेशी पत्रिका स्वयं भी पढ़ें एवं अन्य को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। पत्रिका के संबंध में अपना निष्पक्ष विचार हमें अवश्य भेजें।

आप सीधे बैंक ऑफ इंडिया, खाता नं. 602510110002740 IFSC : BKID 0006025 (Ramakrishnapuram) में जमा करवा सकते हैं और उसकी रसीद और अपना पता आप कार्यालय में अवश्य भेजे।

स्वदेशी पत्रिका कार्यालय, 'धर्मक्षेत्र' शिव शक्ति मंदिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली–22

मेक इन इंडिया की शुरूआत. . .

हमें यह ध्यान रखना होगा कि 'मेक इन इंडिया' अभियान के लिए भारत की नई प्रतिभाओं और भारत के प्रोफेशनल्स की ताकत भी जरूरी होगी। इसलिए हमें देश की नई आबादी को मानव संसाधन (ह्यूमन रिसोर्स) और पेशेवर बनाने के लिए ठोस प्रयास करने होंगे। एक ओर देश के करोड़ों विद्यार्थियों को मानव संसाधन में बदलने के लिए शिक्षा संस्थाओं की नई भूमिका आवश्यक होगी, वहीं दूसरी ओर देश की नई पीढ़ी को अधिक उत्पादकता तथा प्रतिस्पर्धा की दौड़ में पहल, क्षमता और उत्साह के साथ कार्य करना होगा।

■ जयंतीलाल भंडारी

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 'मेक इन इंडिया' अभियान की शुरुआत की है। निसंदेह इस अभियान से देश के चमकीले आर्थिक विकास की संभावनाएं आगे बढ़ेंगी। वस्तुतः मेक इन इंडिया अभियान की बदौलत भारतीय अर्थव्यवस्था में समृद्धि देने वाली कई नई प्रवृत्तियां दिखाई दे रही हैं। भारत निवेश एवं विनिर्माण के एक आकर्षक गंतव्य स्थल के रूप में बदल हो गया है।

रोनाल्ड बर्जर स्ट्रैटिजी कंसल्टेंट्स नामक विश्व प्रसिद्ध संस्था ने अपने सर्वेक्षण में पाया है कि अटलांटिक महासागर के दोनों ओर स्थित कंपनियों को भारत आकृष्ट कर रहा है। आज दुनियाभर की औद्योगिक एवं व्यावसायिक कंपनियों के एजेंडे में भारत की साख बढ़ी है। वर्तमान स्थिति यह है कि भारत की कंपनियों को शामिल किए बिना विश्व उद्योग की तरक्की की कल्पना अधूरी हो गई है। विश्वभर की औद्योगिक कंपनियों के एजेंडे में भारत पहली प्राथमिकता है। वस्तुतः कई क्षेत्रों में भारतीय बाजार ऊंचाई पर ऊंचाई प्राप्त कर रहा है। वस्तुतः देशी–विदेशी निवेश को आकर्षित करने और निर्यात बढ़ाने वाले कई महत्वपूर्ण आधार भारत के पास हैं।

भारत के पास विशाल शहरी और ग्रामीण बाजार, दुनिया का सबसे तेजी से बढ़ता हुआ मध्यम वर्ग, अंग्रेजी बोलने वाली नई पीढ़ी के साथ–साथ विदेशी निवेश पर अधिक रिटर्न जैसे सकारात्मक पहलू मौजूद हैं।

उल्लेखनीय है कि भारत के पास आईटी, सॉफ्टवेयर, बीपीओ, ऑटोमोबाइल, फार्मास्युटिकल्स, इलेक्ट्रॉनिक्स, केमिकल्स एवं धातु क्षेत्र में दुनिया की जानी–मानी कंपनियां हैं, आर्थिक व वित्तीय क्षेत्र की शानदार संस्थाएं हैं। भारत दवा निर्माण, रसायन निर्माण और बायोटेक्नोलॉजी के क्षेत्रों में सबसे तेजी से उभरता हुआ देश है।

यह भी महत्वपूर्ण है कि 'मेक इन इंडिया' अभियान की अच्छी संभावना के पीछे नरेन्द्र मोदी सरकार के द्वारा किए जा रहे कार्यों के प्रारंभिक सकारात्मक आर्थिक परिणाम भी हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम के नवीनतम अध्ययन 2014 के अनुसार सरकारी दफ्तरों में पक्षपात के मुद्दे पर भारत की रैकिंग में जबर्दस्त सुधार हुआ है। भारत 94वें पायदान से उछलकर 49वें पायदान पर आ गया है। नेताओं पर जनता के भरोसे के मामले में भी भारत की रैकिंग में सुधार हुआ है।

इस अध्ययन में यह भी कहा गया है कि सरकारी धन के गलत इस्तेमाल और रिश्वत जैसे मानकों पर भी भारत की स्थिति बेहतर हुई है। स्पष्ट रूप से यह

आधार भी भारत में मेक इन इंडिया की सफलता के संकेत दे रहा है। देश में 'मेक इन इंडिया' के सफल होने की संभावना इसलिए भी है क्योंकि भारत में क्रय क्षमता लगातार बढ़ रही है। पिछले दिनों विश्व बैंक द्वारा अंतरराष्ट्रीय तुलनात्मक कार्यक्रम (आईसीपी) के तहत जारी की गई रिपोर्ट में कहा गया है कि क्रयशक्ति क्षमता यानी परचेजिंग पॉवर पैरिटी (पीपीपी) के आधार पर वर्ष 2011 में अमेरिका और चीन के बाद भारत दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन गया है।

रिपोर्ट के मुताबिक 2011 में दुनिया के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में भारत की हिस्सेदारी 6.4 फीसद थी। जबकि अमेरिका और चीन की हिस्सेदारी क्रमशः 17.1 और 14.9 फीसद रही। इन सबके साथ–साथ भारत में श्रम भी सस्ता है। पिछले दिनों नियंत्रण शोध अध्ययन संगठन टॉवर्स वॉटसन ने अपनी रिपोर्ट में बताया है कि चीन की तुलना में भारत में श्रम ज्यादा सस्ता है। इस शोध अध्ययन में भारत और चीन में इस समय मिल रही मजदूरी और वेतन की तुलना की गई है और निष्कर्ष निकाला गया है कि भारत की तुलना में चीन में श्रमिकों और कर्मचारियों को औसतन दोगुना वेतन मिलता है। स्थिति यह है कि भारत इस समय दुनिया का सबसे सस्ते श्रमबल वाला देश बन गया है।

निसंदेह अपने सस्ते एवं प्रशिक्षित श्रमबल के कारण चीन लगातार कई वर्षों से आर्थिक विकास के मोर्चे पर दमदार प्रदर्शन कर रहा है, लेकिन अब सस्ते श्रमबल की कमी चीन के विकास की चुनौती बनती जा रही है। चीन में सस्ते श्रम की कमी होने का एक बड़ा कारण यह है कि चीन के शहरों में ही नहीं, गांवों में भी अतिरिक्त श्रमिक नहीं बचे हैं। चीन में जहां युवा आबादी कम हो रही है, वहीं बूढ़े लोगों की संख्या लगातार बढ़ रही है। देश में 'मेक इन इंडिया' अभियान इसीलिए भी सफल हो सकता है क्योंकि देश में प्रतिभा पलायन का रुख बदला हुआ दिखाई दे सकेगा और दुनिया के दूसरे देशों में कार्य कर रही भारतीय प्रतिभाएं स्वदेश लौटने की डगर पर आगे बढ़ते हुए दिखाई देंगी।

हाल ही में केंद्रीय राज्य मंत्री जितेंद्र सिंह ने कहा कि दुनिया के कोने–कोने में बड़ी संख्या में कार्यरत भारतीय उद्यमी और वैज्ञानिक स्वदेश में काम करने को लेकर उत्सुक हैं और पिछले कुछ दिनों में विदेशों में काम कर रहे कई ख्याति प्राप्त वैज्ञानिकों तथा उद्यमियों ने देश के विभिन्न मंत्रालयों से संपर्क कर स्वदेश लौटने और काम करने की इच्छा जताई है।

विश्व बैंक की एक रिपोर्ट 'नियंत्रण विकास क्षितिज' में भी कहा गया है कि अपने मजबूत उद्योग व्यवसाय के कारण वर्ष 2025 तक विश्व अर्थव्यवस्था में भारत का दबदबा चमकता हुआ दिखाई देगा। विदेशों से विदेशी पूंजी और नई तकनीक की धरोहर लेकर भारत लौटती हुई प्रतिभाएं भारतीय उद्योग व्यवसाय को नियंत्रण बनाते हुए दिखाई देंगी। ऐसे में कल तक जो भारत प्रतिभा पलायन (ब्रेन ड्रेन) से चिंतित रहता था, अब वह प्रतिभा वापसी लाभ (ब्रेन गेन) से विकास की नई डगर पर तेजी से आगे बढ़ने की संभावनाएं रख रहा है।

नरेन्द्र मोदी सरकार ने ब्रिक्स, सार्क, आसियान देशों के साथ–साथ जापान के साथ व्यापार बढ़ाने के जो कदम उठाए हैं, उनसे देश में उद्यम, कारोबार और रोजगार अवसरों की नई संभावना के साथ अपने परिवार के पास आने की चाहत भी प्रवासियों को वतन की ओर लौटने के लिए प्रेरित कर रही है।

यह सर्वविदित है कि पिछले कई दशकों से भारतीय प्रतिभाएं दुनिया की अर्थव्यवस्थाओं को मजबूत बनाने के लिए याद की जाती रही हैं। पूरी दुनिया में प्रवासी भारतीयों की श्रेष्ठता को स्वीकार्यता मिली है। भारतीयों को दुनिया का सबसे योग्य प्रवासी बताया गया है। । 'मेक इन इंडिया' का सपना साकार करने के लिए सरकार को कारोबार की मुश्किलें कम करनी होंगी। जरूरी है कि घरेलू मैन्यूफैक्चरिंग सेक्टर को भरपूर बढ़ावा दिया जाए। हमें यह ध्यान रखना होगा कि 'मेक इन इंडिया' अभियान के लिए भारत की नई प्रतिभाओं और भारत के प्रोफेशनल्स की ताकत भी जरूरी होगी। इसलिए हमें देश की नई आबादी को मानव संसाधन (ह्यूमन रिसोर्स) और पेशेवर बनाने के लिए ठोस प्रयास करने होंगे।

एक ओर देश के करोड़ों विद्यार्थियों को मानव संसाधन में बदलने के लिए शिक्षा संस्थाओं की नई भूमिका आवश्यक होगी, वहीं दूसरी ओर देश की नई पीढ़ी को अधिक उत्पादकता तथा प्रतिस्पर्धा की दौड़ में पहल, क्षमता और उत्साह के साथ कार्य करना होगा। हम आशा करें कि 'मेक इन इंडिया' अभियान के तहत मोदी सरकार द्वारा घोषित कदम उठाए जाएंगे और भारत में उपभोग का स्तर तथा मांग बढ़ेगी। इससे देश की आर्थिक वृद्धि दर पांच साल में 8.5 से 9 प्रतिशत तक पहुंच सकती है। उम्मीद है कि 'मेक इन इंडिया' अभियान औद्योगिक रूप से चीन को जोरदार चुनौती देने में भारत को समर्थ बनाएगा। ❑

टिकाऊ खेती की जरूरत

मैं अक्सर कहता हूं कि कृषि से होने वाले ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने का सबसे अच्छा तरीका खेती की वर्तमान पद्धति को पारिस्थितिकीय दृष्टि से टिकाऊ खेती में बदल देना है, क्योंकि इससे तकरीबन 25 प्रतिशत ग्रीनहाउस गैस का उत्सर्जन होता है। हमें जोखिमयुक्त जीएम फसलों पर जोर देने के बजाय एकीकृत खेती की पद्धतियों को अपनाना चाहिए।

■ देविन्दर शर्मा

किसानों द्वारा कृषि से विमुख होना और उनमें आत्महत्या की बढ़ती प्रवृत्ति वर्तमान में पूरी दुनिया की एक दुखदायी हकीकत बन रही है। इस पर मुझे आश्चर्य भी होता है कि क्यों नहीं सघन खेती कार्य को सुरक्षित कृषि में क्यों नहीं बदला जा पा रहा है जिससे कृषि आर्थिक दृष्टि से लाभकारी होने के साथ ही दीर्घकालिक रूप से भी टिकाऊ बन सके।

अक्सर कहा जाता है कि तकनीकी प्रगति के अभाव में देश भविष्य की खाद्य जरूरतों की चुनौती को पूरा नहीं कर सकता। चीनी कृषि विश्वविद्यालय के सहयोग से स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय ने प्रचलित खेती की विधियों के अन्य वैकल्पिक उपायों को लेकर एक महत्वपूर्ण अध्ययन किया। यह अध्ययन कार्य तीन वर्षों तक 2009 से 2012 के बीच किया गया, जो कि पूर्वी और दक्षिणी चीन के 153 स्थानों पर हुआ। इससे वही निष्कर्ष सामने आए जिसे मैं वर्षों से कहता आ रहा हूं। इसमें फसलों का चयन करने के लिए एकीकृत भू–फसलीय पद्धति, पौधरोपण की विधि, बीज बोने के समय और पोषण प्रबंधन के माध्यम से उच्च उत्पादकता हासिल करने के तौर–तरीकों पर निगाह डाली गई।

नेचर पत्रिका में 3 सितंबर, 2014 को प्रकाशित एक लेख में लेखक ने दावा किया कि 2012 में जिस भूमि पर किसानों ने 80 प्रतिशत उत्पादकता हासिल की उतनी ही भूमि पर 2030 में चीन अपनी मानव और पशु आबादी को पर्याप्त खाद्य अथवा भोजन उपलब्ध करा सकेगा। इतना ही नहीं इस अवधि में वह ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में 25 प्रतिशत और नाइट्रोजन नुकसान में 50 प्रतिशत तक की कमी ला सकेगा।

स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय में बायोलॉजी विभाग के प्रोफेसर पीटर विटसेक के मुताबिक यदि हम अत्यधिक उच्च उत्पादन को अत्यधिक निम्न पर्यावरणीय क्षति से जोड़ सकते हैं और चीन में ऐसे परिणाम हासिल भी हो रहे हैं तो फिर एक वास्तविक उम्मीद जगती है और इसे दुनिया के दूसरे देशों में भी दोहराया जा सकता है। इस एकीकृत दृष्टिकोण को जब गेहूं, मक्का और चावल के मामले में अपनाया गया तो 97 से 99 फीसद की उच्च उत्पादकता हासिल की

गई, जिसमें रासायनिक पदार्थ नाइट्रोजन की भी बर्बादी नहीं की गई और न ही ग्रीनहाउस गैसों का कोई उत्सर्जन हुआ। अधिक महत्वपूर्ण बात यह रही कि पर्यावरण और स्वास्थ्य पर बिना किसी

प्रतिकूल प्रभाव के कृषि आय में बढ़ोतरी हुई। नेचर पत्रिका में 3 सितंबर, 2014 को प्रकाशित एक लेख में लेखक ने दावा किया कि 2012 में जिस भूमि पर किसानों ने 80 प्रतिशत उत्पादकता हासिल की उतनी ही भूमि पर 2030 में चीन अपनी मानव और पशु आबादी को पर्याप्त खाद्य अथवा भोजन उपलब्ध करा सकेगा। इतना ही नहीं इस अवधि में वह ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में 25 प्रतिशत और नाइट्रोजन नुकसान में 50 प्रतिशत तक की कमी ला सकेगा। स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय के मुताबिक विश्व के दूसरे क्षेत्रों में भी तकनीक का उपयोग किया जा सकता है, जिससे पर्यावरण को क्षति पहुंचाए बिना अधिक उत्पादकता को हासिल किया जा सकेगा। स्टैनफोर्ड का यह अध्ययन ऐसे समय आया है जब आंध्र प्रदेश के कुछ क्षेत्रों, जो अब तेलंगाना का हिस्सा बन गए हैं, में भी कुछ ऐसे ही अनुभव अथवा निष्कर्ष सामने आए हैं।

संभवतः यह दुनिया का सबसे बड़ा पारिस्थितिकीय कृषि रूपांतरण है। हालांकि जलवायु परिवर्तन प्रभाव के चलते सामुदायिक टिकाऊ कृषि प्रबंधन पर अध्ययन किया जाना अभी भी शेष है, लेकिन जो बात अधिक स्पष्ट है वह यह कि रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग और दुरुपयोग से उपजा पर्यावरणीय प्रदूषण तेजी से कम हुआ है। आंध्र प्रदेश और तेलंगाना के 36 लाख एकड़ से अधिक क्षेत्र में फैले हुए तकरीबन 20 लाख किसान गैर–कीटनाशक उपायों को अपना रहे हैं।

स्टैनफोर्ड अध्ययन की तरह ही आंध्र प्रदेश में भी सामुदायिक टिकाऊ कृषि प्रबंधन के माध्यम से बहुत कम पर्यावरणीय नुकसान के साथ उच्च उत्पादकता हासिल की गई। यहां मिट्टी की उर्वरता में सुधार आया है, भूमिगत जल का स्तर बढ़ा है, कीटों का हमला कम हुआ है, जिससे स्वच्छ और सुरक्षित पर्यावरण के कारण कृषक समुदाय के स्वास्थ्य खर्चों में कमी आई है। सबसे अधिक इन क्षेत्रों में आत्महत्या की भी कोई रिपोर्ट नहीं है। साफ है कि चीन का अनुकरण करने वाले आंध्र प्रदेश में भी तकनीकी विकास हुआ है। एकीकृत भूमि और पोषण तकनीक के इस प्रारूप में जो अंतर है वह यही कि इनकी ब्रांडिंग बहुराष्ट्रीय कंपनियों की तरह नहीं है और न ही इन्हें बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थानों द्वारा मदद दी जाती है। जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने किसानों को स्वायल–हेल्थ कार्ड देने की जरूरत जताई तो उन्होंने खेती की निम्न कृषि लागत पर ही बल दिया। भारतीय कृषि शोध परिषद अथवा आइसीएआर और कृषि मंत्रालय को वैसे आधुनिक तकनीक शोध में बदलाव लाने की आवश्यकता है, जिससे पर्यावरण को बहुत अधिक क्षति होती है। कृषि विश्वविद्यालयों को चाहिए कि वे प्रयोगशाला से खेतों और खेतों से प्रयोगशाला की दोहरी प्रक्रिया अथवा नजरिये पर ध्यान केंद्रित करें। यहां मैं चीन में अपनाई गई एक और सरल विधि का उल्लेख करना चाहूंगा जिससे उत्पादकता बहुत बढ़ी है।

अमेरिका की ओरेगन स्टेट यूनिवर्सिटी और चीन के युन्नान एग्रीकल्चर यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों ने एक तरह की खेती से बहुफसली और विविध कृषि पद्धति पर प्रयोग किए हैं। इस विधि से बिना कोई खर्च बढ़ाए और बिना किसी खतरनाक फसलीय बीमारी के किसानों को चावल की उत्पादकता दो गुना तक बढ़ाने में मदद मिली है। यह प्रयोग एक लाख एकड़ क्षेत्र में किया गया, जिसमें दसियों हजार किसानों ने भाग लिया। वैज्ञानिकों ने किसानों से अपने खेतों में दो किस्म के चावल अथवा धान रोपने को कहा। इनमें एक किस्म वह थी जिसमें रोग लगने की संभावना थी, जबकि दूसरी किस्म रोग प्रतिरोधक थी। इसे एक ही तरह के खेतों पर आजमाया गया और परिणाम चौंकाने वाले हासिल हुए। ऐसे समय में जबकि जलवायु परिवर्तन से बचाव वाली विधियों और रणनीतियों पर वैश्विक बहस हो रही है तो चीन में स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय के प्रयोगों से खेती के वैकल्पिक रूपों को लेकर एक नई दिशा मिली है।

मैं अक्सर कहता हूं कि कृषि से होने वाले ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने का सबसे अच्छा तरीका खेती की वर्तमान पद्धति को पारिस्थितिकीय दृष्टि से टिकाऊ खेती में बदल देना है, क्योंकि इससे तकरीबन 25 प्रतिशत ग्रीनहाउस गैस का उत्सर्जन होता है। हमें जोखिमयुक्त जीएम फसलों पर जोर देने के बजाय एकीकृत खेती की पद्धतियों को अपनाना चाहिए। ❑

हालांकि जलवायु परिवर्तन प्रभाव के चलते सामुदायिक टिकाऊ कृषि प्रबंधन पर अध्ययन किया जाना अभी भी शेष है, लेकिन जो बात अधिक स्पष्ट है वह यह कि रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग और दुरुपयोग से उपजा पर्यावरणीय प्रदूषण तेजी से कम हुआ है। आंध्र प्रदेश और तेलंगाना के 36 लाख एकड़ से अधिक क्षेत्र में फैले हुए तकरीबन 20 लाख किसान गैर–कीटनाशक उपायों को अपना रहे हैं।

सही विकास का मॉडल नहीं बना पाया पंजाब

पंजाब में कर्जग्रस्त किसान कर रहे हैं आत्महत्या

पंजाब में अपनाई गई कृषि तकनीकों के कारण जिस प्राचीन कृषि सभ्यता की धरती में हजारों वर्ष से खेती बिना किसी प्रतिकूल असर के हो रही थी, उसमें मात्र 50 वर्षों की हरित क्रान्ति के दौर में मिट्टी व पानी का गंभीर संकट उत्पन्न हो गया है। दो सबसे अधिक प्रभावित जिलों बठिंडा व संगरूर में किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि वर्ष 2000 और 2008 के बीच 1757 किसानों ने आत्महत्या की। इनमें से 1288 किसानों ने मुख्य रूप से कर्जग्रस्त होने के कारण आत्महत्या की जबकि 469 ने अन्य कारणों से।

■ भारत डोगरा

पंजाब की व्यापक पहचान भारत के समृद्ध राज्य के रूप में है जहां पिछड़े राज्यों से बहुत से मजदूर रोजी–रोटी के लिए आते हैं। पंजाब हरित क्रान्ति का अग्रणी राज्य माना जाता है जो कृषि उत्पादन में सबसे आगे है। पंजाब का देश के भौगोलिक क्षेत्र में 1.53 प्रतिशत व जनसंख्या में 2.4 प्रतिशत हिस्सा है, पर यहां देश के कुल गेंहू उत्पादन का 20 फीसद पैदा होता है। चावल का फीसद 11 है और कपास के दस। पंजाब में आय अधिक है व विदेशों में बसे पंजाबी समुदाय से यहां काफी मुद्रा भी प्राप्त होती है। मानवीय विकास सूचकांक में भी इसे भारत के अग्रणी राज्यों में पांचवा स्थान प्राप्त है।

यह तथ्य अपनी जगह हैं, लेकिन अन्य अध्ययन बताते हैं कि पंजाब के अधिसंख्य छोटे किसान बुरी तरह कर्जग्रस्त हैं और उनमें से अनेक खेती–किसानी छोड़ने के लिए मजबूर हो रहे हैं। हजारों किसान पिछले कुछ सालों में आत्महत्या कर चुके हैं। भूमिहीन खेत मजदूरों की स्थिति और भी चिंताजनक है। अनुमान है कि यहां 2000 से 2014 के बीच 15000 से अधिक किसान व खेत–मजदूर कर्ज में डूबे होने के कारण आत्महत्या कर चुके हैं। अनेक किसानों व खेत– मजदूरों का कर्ज उस स्थिति में पहुँच चुका है कि वे अपनी आय के आधार पर इसे चुकाने की स्थिति में नहीं है जबकि ब्याज है कि बढ़ता जाता है।

पंजाब में अपनाई गई कृषि तकनीकों के कारण जिस प्राचीन कृषि सभ्यता की धरती में हजारों वर्ष से खेती बिना किसी प्रतिकूल असर के हो रही थी, उसमें मात्र 50 वर्षों की हरित क्रान्ति के दौर में मिट्टी व पानी का गंभीर संकट उत्पन्न हो गया है। दो सबसे अधिक प्रभावित जिलों बठिंडा व संगरूर में किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि वर्ष 2000 और 2008 के बीच 1757 किसानों ने आत्महत्या की। इनमें से 1288 किसानों ने मुख्य रूप से कर्जग्रस्त होने के कारण आत्महत्या की जबकि 469 ने अन्य कारणों से। इन किसानों की स्थिति के बारे में अध्ययन में पाया गया गया कि उनके पास औसतन तीन एकड़ भूमि थी, उन पर औसतन 1.15 लाख रुपए का कर्ज था जबकि

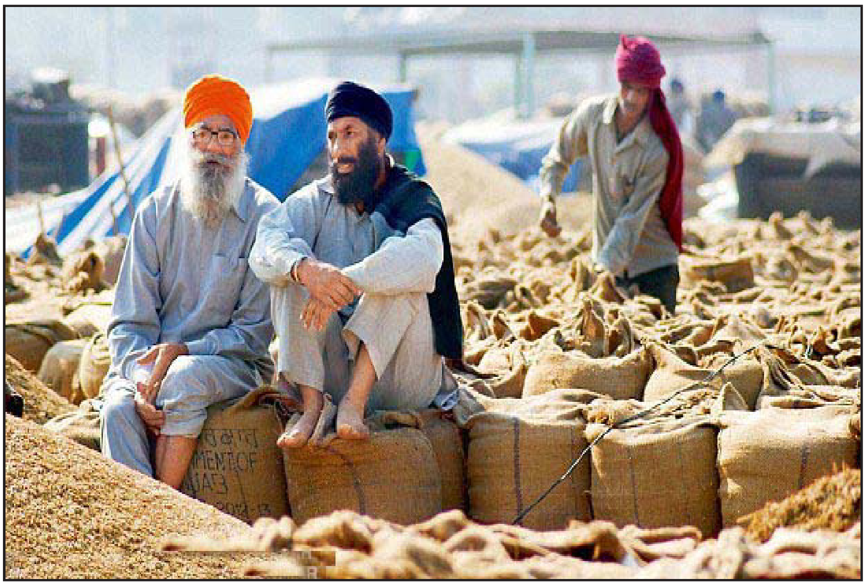

औसत आय 58000 रुपए थी। वर्ष 1997–2003 के बीच कपास की उत्पादकता में महत्वपूर्ण कमी आई। जल–स्तर नीचे जाने से बोरवेल खोदने में अधिक खर्च करना पड़ा। शादी–ब्याह जैसे सामाजिक खर्च भी बढ़ गए। इन सब कारणों से आर्थिक तनाव और तीव्र हो गए जिससे आत्महत्याओं में वृद्धि हुई। *(यह दोनों अध्ययन पंजाब कृषि विविद्यालय ने किए)*

पंजाब में आत्महत्या प्रभावित परिवारों की 136 महिलाओं से बातचीत के आधार पर चर्चित पुस्तक लिखने वाली लेखिका रंजना पाणी ने बताया है कि इनमें से 70 प्रतिशत किसानों व खेत मजदूरों ने कीटनाशक पीकर आत्महत्या की। इस अध्ययन में 79 प्रतिशत महिलाओं ने कहा कि कर्ज से जुड़ा दबाव आत्महत्या का मुख्य कारण था, जबकि 48 प्रतिशत के कहा कि आढ़तियों व बैंक के एजेंटों द्वारा कर्ज वापसी के लिए तरह–तरह से परेशान करना आत्महत्या का एक कारण था। 14 प्रतिशत ने कहा कि आढ़तियों द्वारा फसल का भुगतान न करना आत्महत्या का कारण था। इस अध्ययन से पता चलता है कि किसान या खेत मजदूर की आत्महत्या के बाद उनके परिवार की व विशेषकर महिलाओं की समस्याएं बहुत बढ़ जाती हैं। अनेक किसान परिवारों की कृषि भूमि कम हो गई है या वे भूमिहीन हो गए हैं। उन्हें अपनी भूमि बेचने के लिए मजबूर होना पड़ा।

पंजाब राज्य विज्ञान व तकनीकी परिषद ने पंजाब की पर्यावरण रिपोर्ट में बताया है कि खेती–किसानी का माहौल खत्म हो रहा है। इस कारण आरंभिक वर्षों में यहां के किसानों ने जो समृद्धि प्राप्त की, उसका बहुत तेजी से ह्रास हो रहा है। यह रिपोर्ट कहती है, हरित क्रान्ति की तकनीक ने राज्य के पर्यावरण पर बहुत दबाव उत्पन्न किया है, जिससे भू–जल स्तर गिर रहा है और कृषि रसायनों के कारण मिट्टी में प्रदूषण बढ़ रहा है। पंजाब में 1970–71 से 2005–06 के बीच रासायनिक खाद की खपत 8 गुणा बढ़ गई (213 हजार टन से 1694 हजार टन)।

भारत में कुल कीटनाशकों की खपत में 17 प्रतिशत का उपयोग पंजाब में होता है। रासायनिक खाद, कीटनाशक, खरपतवार नाशक दवाओं आदि के अधिक उपयोग का बहुत प्रतिकूल असर मिट्टी की गुणवत्ता, उसमें मौजूद केंचुओं व सूक्ष्म जीवाणुओं व उसके उपजाऊपन पर पड़ता है। अधिक व भारी कृषि मशीनों का प्रतिकूल असर भी मिट्टी के उपजाऊपन व स्थिरता पर पड़ता है। नाइट्रेट व फास्फेट के ऊपरी जल–स्रेतों व भूजल स्रोतों में पहुंचने से जल–प्रदूषण भी बढ़ रहा है। भू–जल व नदियों दोनों में प्रदूषण बढ़ता जा रहा है व विभिन्न रिपोर्टों के अनुसार इस बढ़ते जल–प्रदूषण के साथ त्वचा, पेट, आंखों की समस्याओं के साथ कैंसर जैसी गंभीर बीमारियां भी जुड़ी हैं।

पंजाब के अधिसंख्य छोटे किसान बुरी तरह कर्जग्रस्त हैं और उनमें से अनेक खेती–किसानी छोड़ने के लिए मजबूर हो रहे हैं। हजारों किसान पिछले कुछ सालों में आत्महत्या कर चुके हैं... अनुमान है कि यहां 2000 से 2014 के बीच 15000 से अधिक किसान व खेत–मजदूर कर्ज में डूबे होने के कारण आत्महत्या कर चुके हैं।

अमृतसर का महल गांव इस कारण चर्चा में था, वहां जल प्रदूषण को जन्म के समय की विकृतियों की वजह भी माना जा रहा है। भू–जल में यूरेनियम के समाचार मिलने पर विभिन्न क्षेत्रों के ट्यूबवेल के पानी के नमूनों की जांच की गई तो 1642 में से 1142 में यूरेनियम की उपस्थिति का टेस्ट पाजिटिव रहा। बठिंडा में यह स्थिति अधिक चिंताजनक पाई गई। विशेष तौर पर कैंसर के लिए चर्चित कुछ क्षेत्रों में कैंसर की दर आर्श्चयजनक हद तक बढ़ रही है। बठिंडा व मालवा क्षेत्र से बीकानेर जाने वाली एक ट्रेन को लोग कैंसर एक्सप्रेस कहते हैं क्योंकि इसमें बीकानेर के एक अस्पताल में इलाज के लिए जाने वाले कैंसर के मरीजों की संख्या बहुत अधिक होती है।

चंडीगढ़ स्थित पीजीआई, बीएआरसी व अन्य संस्थानों के अध्ययनों से पता चला है कि मालवा के अनेक क्षेत्रों में जल कीटनाशक, हैवी मैटल, फ्लोराइड से अधिक प्रभावित हैं। यह कैंसर व अन्य बीमारियों का बड़ा कारण हो सकता है। जन्म के समय की विकृतियां भी इसके कारण उत्पन्न हो सकती हैं। अमृतसर में गुरुनानक देव विविद्यालय का एक अध्ययन बताता है कि पंजाब के 70 प्रतिशत युवक शराब या नशीली दवाओं का सेवन करते हैं। इस पर बहस हो सकती है, विभिन्न स्थानों की स्थिति कुछ भिन्न हो सकती है, पर इसमें संदेह नहीं कि हाल के समय में तरह–तरह के नशे की समस्या तेजी से बढ़ी है। प्रति व्यक्ति शराब की खपत पंजाब में सबसे अधिक बताई जाती है। 2009–10 में पंजाब में 29 करोड़ बोतल शराब की खपत हुई। अवैध शराब व बाहर से मंगाई गई शराब इससे अलग है।

पंजाब में गहराते दुख–दर्द के विभिन्न पक्ष जैसे आर्थिक संकट, कर्ज, आत्महत्या, नशा, स्वास्थ्य समस्याएं, महिलाओं की बढ़ती समस्याएं, उनके विरुद्ध हिंसा कहीं न कहीं आपस में जुड़े हैं। किस तरह के बदलाव व तथाकथित विकास की राह अपनाने के कारण यह सब गंभीर समस्याएं उत्पन्न हुई, उसे पहचानना जरूरी है ताकि इन समस्याओं को ही नहीं, इसके कारणों को भी समग्र रूप से दूर किया जा सके। ❑

लेख

स्वदेशी अपनाने से ही - देश और हमारा भविष्य सुधरेगा

आज हमारा भारतीय समाज यदि विनाशकारी दुष्परिणामों को भुगत रहा है तो इसका एकमात्र कारण ही यह है कि हमने अपने स्वदेशी जीवनक्रम, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के सिद्धांतों को तहस–नहस कर दिया है। पूरे देश और दुनिया में जो गड़बड़ी हो रही है उसका एकमात्र कारण ही इन सिद्धांतों के क्रम को विश्रृंखलित करना है।

■ वीरेन्द्र काजवे आचार्य

मानव जीवन क्रमब्रद्ध सिद्धांतों पर आधारित है ये चार क्रमबद्ध सिंद्धात हैं – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। ये चारों सिद्धांत सीढ़ी के समान हैं यदि हमें ऊंचाई पर पहुंचना है तो प्रथम कदम सीढ़ी के पहले पायदान पर ही रखना पड़ेगा। एक–एक कर ही हम ऊंचाई पर पहुंच सकते हैं। कोई यदि यह सोचें कि वह सीधे सीढ़ी के आखिरी पायदान पर पैर रखकर ऊंचाई पर पहुंच जाए तो यह असंभव और महाविनाशकारी तथा भयंकर परिणाम देता है। विज्ञान भी क्रमबद्ध सिद्धांतों पर चलकर ही अच्छे परिणाम देता है। यदि क्रम से न चले तो इसके भी विनाशकारी परिणाम आते हैं।

आज हमारा भारतीय समाज यदि विनाशकारी दुष्परिणामों को भुगत रहा है तो इसका एकमात्र कारण ही यह है कि हमने अपने स्वदेशी जीवनक्रम, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के सिद्धांतों को तहस–नहस कर दिया है। पूरे देश और दुनिया में जो गड़बड़ी हो रही है उसका एकमात्र कारण ही इन सिद्धांतों के क्रम को विश्रृंखलित करना है। हमें यह भी समझना चाहिए कि यह दुनिया किसी कूड़े के ढ़ेर पर नहीं बल्कि अटल आध्यात्मिक सिद्धांतों पर खड़ी है। जब तक हमारा जीवन इन चार क्रमबद्ध सिद्धांतों पर आधारित था तब तक हम विश्वगुरू थे, तब हमारा देश सोने चिरैया बना हुआ था। आज देश और दुनिया में यदि भोग विलासिता, हिंसा, दुष्कर्म, बेईमानी, भ्रष्टाचार, अत्याचार बढ़ा हुआ है तो इसी क्रम के गड़बड़ाने से।

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का अर्थ है कि धर्म के अनुसार हम आचरण करें। उचित और अनुचित, पाप और पुण्य को ध्यान में रखकर परिश्रम व ईमानदारी से अर्थ–अर्थात् धन कमाए। इस ईमानदारी के धन से हम अपने जीवन की कामनाएं, ईच्छाएं और आवश्यकताओं की पूर्ति करें तब चौथी पायदान अर्थात् मोक्ष की ऊंचाई पर हम अपने आप ही पहुँच जाते हैं। हमारे पूर्वजों ने इन्हीं स्वदेशी आध्यात्मिक सिद्धांतों पर चलकर अपना जीवन जीया है। इसीलिए वे हमारे आदर्श और प्रेरणा स्रोत है। इसीलिए हमारा देश प्राचीन समय में विश्वगुरु था। इसीलिए भारत सोने की चिड़िया कहलाता था।

वर्तमान समय में देश और दुनिया ने जीवन के इस क्रमबद्ध सिद्धांत को तोड़–मोड़ कर रख दिया है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के इस सिद्धांत में से व्यक्ति ने सिर्फ अर्थ अर्थात् पैसे को ही अपना लिया है। तीन सिद्धांतों से किसी का कोई सरोकार ही नहीं है। अधिकांश लोगों की यह धारणा ही बन गई है कि पैसे से सबकुछ प्राप्त किया जा सकता है। इसी का परिणाम है कि व्यापारी जो ग्राहकों को अपना भगवान कहता है वह अपने ही भगवान को दोनों हाथों से लूट रहा है। चिकित्सक जिसे आमजन भगवान का दूसरा रूप मानता है वही उसके लिए यमराज बना हुआ है। देश की सरकारें जो जनता को जनार्दन कहती है वह उसी का शोषण कर रही है।

बुराईयों से कभी अच्छाईयां पैदा नहीं होती वरना कंस और रावण की ऐसी दुर्गती नहीं होती।

आज जो लोग बेईमानी से पैसा कमा रहे है वे सुखी नहीं है। अधर्म कृत्य से जो धन कमाया जा रहा है वह धन परोपकार की दिशा में कभी आपको अग्रसर नहीं कर सकता जो लोग दूसरों का अधिकार छीनकर शोषण कर रिश्वत लेकर धन कमा रहे हैं वे उस धन का उपयोग सिर्फ भोग विलासिता में खर्च कर रहे है। पाप के इस धन से पोषित होने वाले बच्चों में भी ये विकार दिखाई दे रहे है उनके घरों में आपसी कलह और बीमारियां बनी रहती है। रातों की नींद उनकी आंखों में नहीं है। दूसरी तरफ उस श्रमिक को देखिये जो जी तोड़ मेहनत कर सुखी रोटी खाकर अपने बच्चों का पालन–पोषण कर रहा है। वह शाम को चादर ओढ़ कर सोता है और भोर होने पर उठता है। उसे कोई बैचेनी नहीं, उसे कोई बीमारी नहीं। धन में सुख ढूंढने वालों को यह भी समझ लेना चाहिए कि सुख धन में नहीं परमात्मा में छिपा है।

देश और दुनिया का यह बिगड़ा स्वरूप किसी कानून से नहीं सुधरेगा, कोई सरकार कोई महात्मा इसे नहीं सुधार सकता। यह सुधरेगा तो जीवन के इन्हीं चार क्रमबद्ध जीवन सिद्धांतों पर वापस लौटने पर, स्वदेशी को धारण करने पर।❑

विचार-विमर्श

तारीफ, आलोचना के बीच का सच...

आज उत्तर प्रदेश के विकास के बगैर इस देश का समग्र विकास संभव नहीं है। वह कैसे होगा, किन हालात में होगा, इन सवालों पर विचार करना जरूरी है। बिजली के मामले में उत्तर प्रदेश अठारहवीं शताब्दी में है। इसमें इक्कीसवीं सदी का विदेशी निवेश, घरेलू निवेश कैसे आएगा? यह सवाल राज्य स्तर की चिंता का नहीं, मोदी स्तर की चिंता का विषय होना चाहिए। अभी संभावनाएं बनी हैं, पर उन्हें जमीन पर उतारने के लिए बहुत लंबा सफर तय करना है।

■ आलोक पुराणिक

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की विदेश यात्राओं की गर्द बैठ गई है। अब बातें ज्यादा संजीदा और संयत माहौल में हो सकती हैं। मोदी के कामकाज की स्टाइल

में एक बात यह है कि उनके हर फैसले पर दो अतिवादी किस्म की प्रतिक्रियाएं आती हैं। प्रतिक्रियाओं के एक अतिवादी स्कूल की निगाह में तो मोदी जो भी कर रहे हैं, वह गलत है। एकदम गलत है।

हालांकि इसमें वास्तव में गलत क्या है और उस गलत का विकल्प क्या है, इस पर ठोस बात अभी कहीं दिखाई नहीं पड़ रही है। यह स्कूल कहता है कि जो भी कुछ मोदी अच्छा कर रहे हैं, वह दरअसल पुरानी सरकार की विरासत है और जो कुछ भी खराब है, विफलता है, वह मोदी का किया-धरा है।

अतिवादी किस्म की प्रतिक्रिया का दूसरा स्कूल है, जो यह कहता है कि मोदी ने सब कुछ बदल दिया है। मोदी ने चीन के राष्ट्रपति को यूँ प्रभावित किया और अमेरिका में यूँ झण्डे गाड़े। दोनों ही अतिवादी स्कूल हैं। सचाई कहीं बीच में है। सच्चाई दरअसल अधिकतर बीच में ही होती है। पर बीच में रहना राजनीति के लिए मुफीद नहीं होता, तो प्रतिक्रियाएं अति पर चलती हैं, एक्शन हो सकता है कि अतिवादी न हो। मोदी अपने चुनावी भाषणों में आधार-कार्ड परियोजना के खिलाफ बोलते नजर आते थे, अब स्थिति दूसरी है। अब सरकार से पब्लिक को ट्रांसफर होने वाली तमाम सब्सिडी, सहयोग-राशि का आधार यही आधार-कार्ड ही बनेगा। महंगाई को चुनाव का एक मुद्दा बनाने वाले, महंगाई के आधार पर पुरानी सरकार को एकदम फ्लॉप घोषित करने वाले मोदी के भाषणों में महंगाई शब्द तलाशना मुश्किल है।

नरेन्द्र मोदी सफाई, झाड़ू, मन की बात से लेकर जाने क्या-क्या और कहां-कहां वह बोल रहे हैं, पर महंगाई पर उनके मुंह से हाल में कुछ भी सुनने को नहीं मिला है। पर इसका मतलब यह नहीं है कि मोदी ने कुछ किया ही नहीं है। नेपोलियन ने एक बार कहा था कि किसी भी जनरल के साहसी होने के साथ-साथ उसका भाग्यशाली होना भी बहुत जरूरी है। नरेंद्र मोदी भाग्यशाली रहे हैं कई मामलों में। रिजर्व बैंक के गवर्नर रघुराम राजन द्वारा उठाए गए कदमों की वजह से

विदेशी निवेशक तो दूर, भारत के बड़े उद्योगपतियों ने हाल के सालों में बड़ी परियोजनाएं बिहार और उत्तर प्रदेश में नहीं डाली हैं। पश्चिम बंगाल से उठकर टाटा मोटर्स का प्लांट जाता है, तो सीधे गुजरात जाता है। क्षेत्रीय विकास के सवाल महत्वपूर्ण होते हैं। मोदी के सामने चुनौती है कि कैसे बिहार और उत्तर प्रदेश के हाल सुधारे जाएं।

और ग्लोबल हालात बदलने के चलते विदेशी मुद्रा की स्थिति बेहतर हुई। इस पूरी स्थिति का श्रेय अकेले मोदी को नहीं जाता।

मोदी ने सबसे बड़ा काम किया है, जो किसी भी राजनेता की पहली जिम्मेदारी है, वह है विकास पैदा करना। इस काम को करना बंद कर दिया था, यूपीए–दो के प्रधानमंत्री ने। मोदी ने भरोसा पैदा किया है, यही काम है राजनेता का। बाकी काम करने के लिए तो देश में अधिकांश लोग तैयार ही होते हैं। मोदी भाग्यशाली इस मामले में रहे हैं कि इस साल विकट सूखे की आशंका थी, पर सितम्बर जाते–जाते यह साफ हो गया कि हालात उतने खराब नहीं हैं, जितने की आशंकाएं व्यक्त की जा रही थीं। सूखा उतना मारक नहीं रहेगा।

विदेशी निवेश चीन और अमेरिका से आएगा, ऐसी संभावनाएं भी व्यक्त की जा रही हैं। चीन के राष्ट्रपति जब भारत में थे, और मोदी जब यूएस में थे, तब ऐसी बातें कही जा रही थीं कि जैसे भारत अभी एक झटके में अमेरिका, चीन के स्तर पर पहुंचने वाला है। राष्ट्र के नाम संदेशों में भावनात्मक बातें, किसी के किसी के साथ मुकाबले की बात शोभा देती है। पर ठोस आर्थिक फैसले रीयल्टी चेक करके, हकीकत चेक करके ही होते हैं। ठोस तथ्य यह है कि चीन की अर्थव्यवस्था भारत की अर्थव्यवस्था के मुकाबले करीब पांच गुनी है। भारत की अर्थव्यवस्था का सकल घरेलू उत्पाद करीब दो ट्रिलियन डॉलर है (एक ट्रिलियन यानी 1000 बिलियन यानी अरब डॉलर, एक डॉलर करीब साठ रुपए), वहीं चीन की अर्थव्यवस्था का साइज करीब दस ट्रिलियन डालर का है। यानी करीब पांच गुना है। चीन महाशक्ति है। बहुत बड़ी शक्ति है भारत के मुकाबले। इस बात को समझना चाहिए। भारत महाशक्ति के तौर पर अभी एक संभावना है, जबकि चीन बाकायदा महाशक्ति है।

अमेरिका को देखें तो उसके सकल घरेलू उत्पाद का साइज करीब 16 ट्रिलियन डॉलर है यानी अमेरिका के सकल घरेलू उत्पाद का साइज भारतीय सकल घरेलू उत्पाद के साइज का करीब आठ गुना है। अमेरिका के साथ–साथ चलने की बात जब भारत के प्रधानमंत्री करते हैं, तो पक्के तौर पर यह भावनात्मक बात है। पर तथ्य यह है कि अमेरिका दौड़ रहा है, जबकि हम दौड़ने की तैयारी कर रहे हैं। यह बात सही है कि भारत की जो खूबियां हैं, वह अमेरिका के पास नहीं है। एक बड़ी जनसंख्या, जिसका बड़ा हिस्सा नौजवान है, जो महत्वपूर्ण कस्टमर हो सकता है, भारत के पास है।

आज चीन के लिए भारत एक बड़े बाजार से ज्यादा कुछ नहीं है। अमेरिका के साथ और भी साझेदारियां संभव हैं। अपने साइज से करीब पांच गुना और आठ गुना ज्यादा बड़ी अर्थव्यवस्थाओं के बराबर होने का ख्वाब आसान नहीं है। ख्वाब को जमीन पर लाना आसान नहीं है। तब और जबकि तमाम मसले उलझे हुए हों।

मोदी जो विदेशी परियोजनाएं अब तक लाए हैं या जिनकी बात हुई है, उनमें से अधिकांश उनके निर्वाचन क्षेत्र वाराणसी और गुजरात से जुड़ी हैं। चीन के राष्ट्रपति का गुजरात में फोकस रहा। जो नया निवेश विदेश से आएगा, वह पश्चिम भारत के राज्यों में जैसे गुजरात और महाराष्ट्र में जाएगा, ऐसी संभावनाएं जताई जा रही हैं। उत्तर प्रदेश और बिहार के हिस्से क्या कुछ विदेशी निवेश परियोजनाएं लगेंगी, यह सवाल बहुत महत्वपूर्ण है। विदेशी निवेश भारत में आए, यह तो ठीक है। पर बिहार और उत्तर प्रदेश का भी रुख करे विदेशी निवेश, तो यहां के हालात सुधरें। पर यहां आने की संभावनाएं न के बराबर हैं– बिजली, सड़क, कानून व्यवस्था, ये मसले विदेशी क्या देशी निवेशकों के मन में खौफ भर देते हैं। विदेशी निवेशक तो दूर, भारत के बड़े उद्योगपतियों ने हाल के सालों में बड़ी परियोजनाएं बिहार और उत्तर प्रदेश में नहीं डाली हैं। पश्चिम बंगाल से उठकर टाटा मोटर्स का प्लांट जाता है, तो सीधे गुजरात जाता है। क्षेत्रीय विकास के सवाल महत्वपूर्ण होते हैं। मोदी के सामने चुनौती है कि कैसे बिहार और उत्तर प्रदेश के हाल सुधारे जाएं।

संदर्भ के तौर पर यह बताना जरूरी है कि करीब बीस करोड़ की जनसंख्या वाला उत्तर प्रदेश पूरे देश की जनसंख्या में करीब 16 प्रतिशत का योगदान देता है। अमेरिका की आबादी करीब 30 करोड़ है, यानी आज उत्तर प्रदेश का मतलब है अमेरिका की दो–तिहाई जनसंख्या। जनसंख्या–उर्वर उत्तर प्रदेश कुछ सालों में अकेले ही अमेरिका के बराबर हो जाएगा। यूपी के विकास के बगैर इस देश का समग्र विकास संभव नहीं है। वह कैसे होगा, किन हालात में होगा, इन सवालों पर विचार करना जरूरी है। बिजली के मामले में उत्तर प्रदेश अठारहवीं शताब्दी में है। इसमें इक्कीसवीं सदी का विदेशी निवेश, घरेलू निवेश कैसे आएगा? यह सवाल राज्य स्तर की चिंता का नहीं, मोदी स्तर की चिंता का विषय होना चाहिए। अभी संभावनाएं बनी हैं, पर उन्हें जमीन पर उतारने के लिए बहुत लंबा सफर तय करना है। ❑

विश्लेषण

नौकरशाही पर भरोसा हानिकारक

केन्द्र सरकार के पूर्व सचिव कमल टावरी कहते हैं कि अधिकारी अपने स्वार्थ के आधार पर निर्णय लेते हैं। जैसे मनरेगा के माध्यम से वे रोजगार सृजन की नीति बनायेंगे चूंकि इसमे रकम आवंटित करने में घूस खाने के पर्याप्त अवसर मिलते हैं। फर्जी कार्यों तथा किसानों पर पड़ रहे दुष्प्रभावों से इन्हें कुछ लेना देना नहीं हैं। मनरेगा के स्थान पर किसानों तथा उद्यमियों को रोजगार सब्सिडी देने में इनकी रूचि कम है रहती क्योंकि इसमें जादा लाभ बनिये को और कम लाभ नौकरशाही को मिलते हैं।

■ डॉ. भरतझुनझुनवाला

नरेन्द्र मोदी ने विदे   ा नीति में स्पष्ट एवं साहसिक दिशा परिवर्तन किया गया है। देश की रक्षा के लिये असलाहों की खरीद आदि में तेजी लाई है। लेकिन कुछ निर्णय पुरानी दिशा में तेजी से चलने के भी किये गये हैं। विदेशी निवेश को जोर भाोर से आमंत्रित करना, खुदरा रिटेल में विदेशी निवेश को ठील देना तथा आधार कार्ड व्यवस्था को बढ़ावा देना इस श्रेणी में आते हैं। खुदरा रिटेल तथा आधार पर श्री मोदी की वर्तमान दृष्टि पार्टी की चुनाव पूर्व दृष्टि के विपरीत दिखते हैं।

पूर्व में भाजपा ने खुदरा रिटेल को आम आदमी के विरुद्ध तथा आधार योजना को देश की आंतरिक सुरक्षा के लिये हानिकारक बताया था। यूपीए सरकार द्वारा जनहित में लागू किये गये भूमि अधिग्रहण कानून को भी ठीला करने पर विचार किया जा रहा है। इन निर्णयों के पीछे देश की नौकरशाही का हाथ दिखता है।

हमारी परम्परा में मूल रूप से नौकरशाहों को भ्रष्ट और स्वार्थी बताया गया है। 'अर्थशास्त्र' में कौटिल्य लिखते हैं कि साधुओं से कहना चाहिये कि सरकारी अधिकारियों द्वारा राजस्व की चोरी का पता लगाने के लिये अपने शिष्यों को कहें; मंत्रियों और राजस्व अधिकारियों पर नजर रखने के लिये जासूसों की नियुक्ति करें; तथा जासूसों द्वारा भेष बदल कर अधिकारियों को घूस देकर ट्रैप करें। मनुस्मृति में कहा गया है कि राजा द्वारा नियुक्त किये गये कर्मचारी मुख्यतः दूसरों की सम्पत्ति हड़पने वाले तथा चोर होते हैं, राजा को इनसे अपनी प्रजा की रक्षा करनी चाहिये। ऐसी नौकरशाही से मंत्री नरेन्द्र मोदी ने गुजरात में अच्छे कार्य कराने का श्रेय हासिल किया है। संभव है कि उन्होंने कौटिल्य के बताये अनुसार जासूस आदि की नियुक्ति की हो।

लेकिन दिल्ली में नौकरशाही से काम लेने में अन्तर है। राज्य सरकार का कार्य केन्द्र सरकार के द्वारा बनाई गयी पालिसियों को लागू करने का होता है। नीति निर्धारण केन्द्र करता है। दूर संचार, विदेश व्यापार, मुद्रा, रेल, इनकम टैक्स एवं एक्साइज ड्यूटी जैसे विभाग केन्द्र के पास है। राज्य के अधिकार में आने वाले क्षेत्रों पर भी केन्द्र ने अपना प्रभुत्व जमा लिया है जैसे बिजली, पर्यावरण, श्रम और खनन आदि। राज्य के अधिकार में पुलिस तथा शिक्षा एवं स्वास्थ जैसे चुनिन्दे क्षेत्र ही बचे हैं। राज्य की भूमिका कम्पनी के मैनेजर जैसी रह गई है। जैसे केन्द्र सरकार ने मनरेगा कार्यक्रम बनाया। राज्य सरकार मात्र इतना तय कर सकती है पक्की सड़क के किनारे मिट्टी डाली जाये अथवा कच्ची सड़क को उंचा किया जाये। कार्यक्रम का मूल स्वरूप केन्द्र द्वारा तय किया जाता है जैसे कितने दिन रोजगार दिया जायेगा इत्यादि। केन्द्र के इन कार्यक्रमों को नौकरशाहों के सहयोग से लागू करने में मोदी ने सफलता हासिल की थी।

> **पूर्व में भाजपा ने खुदरा रिटेल को आम आदमी के विरुद्ध तथा आधार योजना को देश की आंतरिक सुरक्षा के लिये हानिकारक बताया था। यूपीए सरकार द्वारा जनहित में लागू किये गये भूमि अधिग्रहण कानून को भी ठीला करने पर विचार किया जा रहा है। इन निर्णयों के पीछे देश की नौकरशाही का हाथ दिखता है।**

प्रश्न है कि नौकरशाही की इस सकारात्मक भूमिका को क्या नीति निर्धारण में लागू किया जा सकता है? इनके चरित्र का एक हिस्सा भ्रष्टाचार का है जिसे कौटिल्य और मनु ने बताया है। दूसरे हिस्से की व्याख्या समाजभाास्त्री वेबर ने की है। उनके अनुसार नौकरशाही की कार्यशैली 'फेसलेस' यानि व्यक्तिहीन होती है। इनके द्वारा नियमों को बिना बुद्धि लगाये लागू किया जाता है जैसे कि वे रोबोट हों। जैसे यदि सरकार ने आदेश दिया कि मनरेगा के अंतर्गत कार्य प्रातः 8 बजे भाुरू किया जायेगा तो असम से गुजरात तक नौकरशाही उसे लागू कर देगी। यह नहीं देखा जायेगा कि असम में

सूर्योदय जल्द एवं गुजरात में देर से होता है।

राज्य स्तर पर नौकरशाही की यह बुद्धिहीनता लाभप्रद रही है। परन्तु नीति निर्धारण में जरूरत बुद्धिमान व्यक्ति की होती है जो प्रस्तावित नीति के गुण दोष पर समग्र विचार कर सके। जैसे मनरेगा के अन्तर्गत श्रमिकों को काम देने का किसानों और देश की खाद्य सुरक्षा पर क्या प्रभाव पड़ेगा। इस प्रकार का चिन्तन करना नौकरशाह की काबिलियत के बाहर होता है।

केन्द्र सरकार के पूर्व सचिव कमल टावरी कहते हैं कि अधिकारी अपने स्वार्थ के आधार पर निर्णय लेते हैं। जैसे मनरेगा के माध्यम से वे रोजगार सृजन की नीति बनायेंगे चूंकि इसमे रकम आवंटित करने में घूस खाने के पर्याप्त अवसर मिलते हैं। फर्जी कार्यों तथा किसानों पर पड़ रहे दुष्प्रभावों से इन्हें कुछ लेना देना नहीं हैं। मनरेगा के स्थान पर किसानों तथा उद्यमियों को रोजगार सब्सिडी देने में इनकी रूचि कम है रहती क्योंकि इसमें जादा लाभ बनिये को और कम लाभ नौकरशाही को मिलते हैं। नौकरशाहों को पेड़ लगाने और पेड़ काटने के कार्यक्रम के बीच चयन करना हो तो वे पेड़ काटने के कार्यक्रम का चयन करेंगे चूंकि इससे घूस एक मुश्त और तत्काल मिलेगी जबकि पेड़ लगाने के कार्यक्रम में घूस धीरे–धीरे मिलेगी।

नौकरशाही के इस स्वार्थी चरित्र का विभिन्न लाबियां भरपूर लाभ उठाती हैं। एक बड़े कार्पोरेट घराने की पालिसी है कि आईएएस अधिकारियों की सन्तानों को विदेश में पढ़ाई के लिये वजीफा दे दो। वे जानते हैं कि इन अधिकारियों की नियुक्ति आज नहीं तो कल ऐसे स्थानों पर होगी जहां उनसे मनचाहे काम कराना लाभप्रद होगा। विदेशी ताकतें भी नौकरशाहों को लुभाने में कसर नहीं छोड़ती हैं। एक बार मैं किसी लेख के संबंध में यूरोपीय यूनियन के अधिकारी का साक्षात्कार करने के लिये गया। उन्होंने अपनी बात कही और इशारा किया कि मुझे यूरोपीय

यूनियन के ब्रसल्स–स्थित कार्यालय से न्यौता भेजा जा सकता है। परन्तु मैने लेख में उनके इच्छित दृष्टिकोण का अनुमोदन नहीं किया। वह न्यौता भी नहीं आया। इसी प्रकार मैं एक यूरोपीय देश का सलाहकार था। मुझे बताया गया कि अन्तिम चरण में यूरोपीय मुख्यालय में व्याख्यान देना होगा। किसानों को वृक्षारोपण के लिये मदद दी जा रही थी। मैने पाया कि किसानों द्वारा इस प्रोग्राम का उपयोग मुख्यतः गोचर भूमि पर कब्जा करने के लिये किया जा रहा था। मैने इस बात को रपट में लिख दिया। मुख्यालय से व्याख्यान का न्यौता नहीं आया।

केन्द्र सरकार के एक सेवानिवृत्त ऊर्जा सचिव को विश्व बैंक द्वारा लगभग 50,000 रुपये प्रति घंटे की सलाहकारी की फीस अदा की जा रही है। तात्पर्य यह कि प्रलोभनों के द्वारा विदेशी ताकतों द्वारा नौकरशाहों से मनचाही नीतियां बनवा ली जाती हैं।

केन्द्र में नीति निर्धारण में नौकरशाहों पर भरोसा करना घातक होगा। अपने कार्पोरेट और विदेशी हितैषियों के द्वारा बताई गयी नीतियों को ये प्रमोट करेंगे। इन्हें न देश की संप्रभुता से मतलब है न आम आदमी से। रिटेल में विदेशी निवेश को सरल बनाना, जीन परिवर्तित खाद्यान्नों की फील्ड ट्रायल की छूट देना, भूमि अधिग्रहण कानून को ढीला करना, गंगा को तालाबों में परिणित करना आदि इसी दुष्ट मानसिकता की उपज हैं।

भारतीय परम्परा में क्षत्रीय को सलाह ब्राह्मण से लेनी चाहिये न कि भाूद्र से। यहां ब्राह्मण का अर्थ फकीर से और भाूद्र का अर्थ दूसरों की सेवा करने वालों से लेनी चाहिये। आईएएस अधिकारी मुख्य रूप से उच्च श्रेणी के भाूद्र होते हैं। इनका व्यवहार तात्कालिक हितों को साधने का होता है। अतः इनकी सलाह पर चलने से मोदी को बचना चाहिये। ❑

समस्या

आपदा प्रबंधन की खामियां

देशभर के इंजीनियरों, डाक्टरों, प्रशासनिक अधिकारियों, प्रबंधन गुरुओं और जनप्रतिनिधियों को ऐसी विषम परिस्थितियों से निपटने की हर साल बाकायदा ट्रैनिंग दी जाए। शांति काल में तो फौजी भगवान सिद्ध होते हैं लेकिन खुदा ना खास्ता, सीमा पर तनाव के चलते यदि अधिसंख्य फौज वहां तैनात हो तो क्या हो? ऐसे में होमगार्ड, एनसीसी, एनएसएस व स्वयंसेवी संस्थाओं को दूरगामी योजनाओं पर काम करने के लिए सक्षम बनाना समय की मांग है।

■ **पंकज चतुर्वेदी**

कश्मीर में आई बाढ़ के दौरान तब तक अफरा–तफरी मची रही जब तक फौज व केंद्रीय अर्धसैनिक बलों ने राहत कार्य का जिम्मा नहीं ले लिया। आपदा प्रबंधन व स्थानीय शासन–प्रशासन तो असहाय से हो गए थे। देश में कही भी बाढ़, भूकंप, आगजनी या बोरवेल में बच्चा गिरने जैसी घटनाओं से राहत का आखिरी विकल्प फौज बुलाना रह जाता है। शासन–प्रशासन तो नुकसान के बाद बस बयान – बहादुर बन राहत बांटने में जुट जाता है। लेकिन यह सवाल कहीं से नहीं उठता कि आपदा प्रबंधन महकमा क्या कर रहा था?

बिहार, असम व कुछ अन्य राज्यों के आधा दर्जन जिलों में हर साल बाढ़ और फिर सूखे की त्रासदी होती है। पानी में फंसे लोगों को निकालना शुरू किया जाता है तो भूख–प्यास सामने खड़ी दिखती है। पानी उतरता है तो बीमारियां चपेट में ले लेती हैं। बीमारियों से जैसे–तैसे जूझते हैं तो पुनर्वास का संकट होता है। कहने को देश में आपदा प्रबंधन महकमा है और भारत सरकार के गृह मंत्रालय के अधीन आपदा प्रबंधन पर एक पोर्टल भी है लेकिन सवा अरब की आबादी वाला देश, जिसका विज्ञान–तकनीक, स्वास्थ्य, शिक्षा और सेना के मामले में दुनिया में नाम है, एक क्षेत्रीय विपदा के सामने असहाय दिखता है। प्रधानमंत्री ने बेशक कश्मीर की आपदा को राष्ट्रीय आपदा घोषित कर दिया हो, लेकिन यहां राहत कार्य वैसे ही चलते दिख रहे हैं, जैसे 50 साल पहले होते थे। इस बार भी देशभर से चंदा और सामान जुटा, मदद के लिए असंख्य हाथ आगे आए, लेकिन उसे जरूरतमंदों तक तत्काल पहुंचाने की कोई सुनियोजित नीति नहीं थी। यह हर हादसे के बाद होता है।

आज कहने को तो सेकेंडरी स्तर के स्कूल और कॉलेज में आपदा प्रबंधन बाकायदा पाठ्यक्रम का विषय बना दिया गया है। गुजरात भूकंप के बाद सरकार की नींद खुली थी कि आम लोगों को ऐसी प्राकृतिक विपदाओं से जूझने के लिए प्रशिक्षण देना चाहिए लेकिन उन पुस्तकों का ज्ञान कहीं भी व्यावहारिक होता नहीं दिखता।

> **देश में कही भी बाढ़, भूकंप, आगजनी या बोरवेल में बच्चा गिरने जैसी घटनाओं से राहत का आखिरी विकल्प फौज बुलाना रह जाता है। शासन–प्रशासन तो नुकसान के बाद बस बयान – बहादुर बन राहत बांटने में जुट जाता है। लेकिन यह सवाल कहीं से नहीं उठता कि आपदा प्रबंधन महकमा क्या कर रहा था?**

देश में आपदा प्रबंधन के नाम पर गठित विभागों का मासिक खर्च कोई दो करोड़ है, लेकिन उनके पास वे नक्शे तत्काल उपलब्ध नहीं मिलते कि किस इलाके में पानी भरने पर किस तरह लोगों को जल्द से जल्द निकाला जाए। यहां तक कि नदी तट के किनारे की बस्तियों में बाढ़ की संभावनाओं के मद्देनजर जरूरी नावों तक की व्यवस्था नहीं होती। बिहार गवाह है कि वहां पानी से बच कर भाग रहे लोगों को मझधार में दबंग लूट लेते हैं। बाढ़ से घिरे गांवों के मकान बदमाश खाली कर जाते हैं। माना कि बाढ़ या तूफान तो अचानक आ जाते हैं लेकिन बुंदेलखंड सहित देश के कई हिस्सों में सूखे की विपदा से हर साल करोड़ों लोग प्रभावित होते हैं। सूखा एक प्राकृतिक आपदा है और इसका अनुमान पहले से हो जाता है, इसके बावजूद आपदा प्रबंधन का महकमा कहीं तैयारी करता नहीं दिखता। भूख और प्यास से बेहाल लाखों लोग घर–गांव छोड़ भाग जाते हैं। जंगल में दुर्लभ जानवर और गांवों में दुधारू पशु बेमौत मरते हैं। इस मामले में हमने अपने अनुभवों से भी नहीं सीखा।

कोई पांच साल पहले आंध्रप्रदेश के तटवर्ती जिलों में आए जल–विप्लव के दौरान वहां प्रशासन ने सबसे पहले और तत्काल जिस राहत सामग्री की व्यवस्था की थी, वह था बोतलबंद सुरक्षित पेयजल

व ओरआरएस। कारण बाढ़ग्रस्त क्षेत्र में जल जनित बीमारियों का बहुत खतरा होता है। गुजरात भूकंप का उदाहरण भी सामने है। वहां पुराना मलबा हटाने में भारी मशीनों का उपयोग, बड़े स्तर पर सुरक्षित मकानों का निर्माण और रोजगार के साधन उपलब्ध कराने से जीवन को सामान्य बनाने में तेजी आई थी। लेकिन बिहार व बुंदेलखंड में इन अनुभवों के इस्तेमाल से परहेज किया जाता रहा है।

यूनेस्को ने भारत में आपदा प्रबंधन से निबटने व जागरूकता के उद्देश्य से कई पुस्तकों का प्रकाशन किया। यूनेस्को ने दिल्ली के जामिया मिलिया इस्लामिया में एक कार्यशाला का आयोजन कर बाढ़, सूखे और भूकंप पर ऐसी सामग्री तैयार करवाई जो समाज व सरकार दोनों के लिए मार्गदर्शक हो। तीनों विपदाओं पर एक–एक फोल्डर, संदर्भ पुस्तिका और एक–एक कहानी का सेट रखा गया। यह प्रकाशन जामिया मिलिया इस्लामिया के स्टेट रिसोर्स सेंटर ने किया है और उम्मीद की जाती है कि इसका वितरण देशभर में हुआ होगा। जाहिर है, इस कवायद में भी लाखों– लाख रपए खर्च हुए होंगे। सवाल यह है कि ऐसे उपाय वास्तविकता के धरातल पर धराशायी क्यों हो जाते हैं!

यह बात पाठ्यक्रम और अन्य सभी पुस्तकों में दर्ज है कि बाढ़ प्रभावित इलाकों में पानी, मोमबत्ती, दियासलाई, पालीथीन शीट, टार्च, सूखा व जल्दी खराब न होने वाला खाने का पर्याप्त स्टाक होना चाहिए। इसके बावजूद विडंबना है कि पूरे देश का सरकारी अमला आपदा के बाद हालात बिगड़ने के बाद ही चेतता है और राहत बांटने को सबसे बड़ी उपलब्धि मानता है। राहत के कार्य सदैव से विवादों और भ्रष्टाचार की कहानी कहते रहे हैं। कई बार तो लगता है, इन आपदाओं में राहत के नाम पर जितने पैसे की घोषणा सरकार करती है, उससे पूरे इलाके का विकास हो सकता है, बशर्ते पैसा सीधे पीड़ित के पास पहुंचे।

सरकारी रिकॉर्ड पर भरोसा करें तो देश के 3500 गांवों के 8000 जनप्रतिनिधियों को बाढ़ की आपदा से जूझने का प्रशिक्षण भी दिया जा चुका है। विडंबना है कि अब तक हम यह नहीं समझ पाए हैं कि बाढ़ या ऐसी ही विपदा के समय क्या राहत सामग्री भेजी जाए। अक्सर खबरों में रहता है कि अमुक जगह भेजी गई राहत सामग्री लावारिस पड़ी रही।

गौरतलब है कि देश में विभिन्न नदियों में बाढ़ की पूर्व सूचना देने हेतु 166 केंद्र काम कर रहे हैं। लेकिन हमे अब तक पता नहीं है कि वैज्ञानिक चेतावनी के बाद करना क्या चाहिए। इनमें से 134 केंद्रों का काम जल स्तर और 32 की जिम्मेदारी जल के तीव्र प्रवाह की सूचना देना है। यही नहीं, संयुक्त राष्ट्र सहायता कार्यक्रम व यूरोपीय सहायता संगठन की मदद से भारत सरकार 17 राज्यों के बाढ़ प्रभावित 169 जिलों में अक्टूबर 2007 से विशेष आपदा प्रबंधन कार्यक्रम भी चला रही है। समय–समय पर कोसी, गंगा और ब्रह्मपुत्र के रौद्र रूप ने बता दिया है कि सभी कार्यक्रम कितने कारगर रहे हैं।

विडंबना है कि पूरे देश का सरकारी अमला आपदा के बाद हालात बिगड़ने के बाद ही चेतता है और राहत बांटने को सबसे बड़ी उपलब्धि मानता है। राहत के कार्य सदैव से विवादों और भ्रष्टाचार की कहानी कहते रहे हैं। कई बार तो लगता है, इन आपदाओं में राहत के नाम पर जितने पैसे की घोषणा सरकार करती है, उससे पूरे इलाके का विकास हो सकता है, बशर्ते पैसा सीधे पीड़ित के पास पहुंचे।

सरकारी रिकॉर्ड पर भरोसा करें तो देश के 3500 गांवों के 8000 जनप्रतिनिधियों को बाढ़ की आपदा से जूझने का प्रशिक्षण भी दिया जा चुका है। विडंबना है कि अब तक हम यह नहीं समझ पाए हैं कि बाढ़ या ऐसी ही विपदा के समय क्या राहत सामग्री भेजी जाए। अक्सर खबरों में रहता है कि अमुक जगह भेजी गई राहत सामग्री लावारिस पड़ी रही। असल में ऐसी सामग्री भेजना व संग्रहण करना इतना महंगा होता है कि उसे न भेजना ही तो बेहतर हो। बाढ़ग्रस्त इलाके में सेनेटरी नेपकिन, मोमबत्ती, फिनाइल, क्लोरीन की गोलियां, पेक्ड पानी आदि की सर्वाधिक जरूरत होती है।

देशभर के इंजीनियरों, डाक्टरों, प्रशासनिक अधिकारियों, प्रबंधन गुरुओं और जनप्रतिनिधियों को ऐसी विषम परिस्थितियों से निपटने की हर साल बाकायदा ट्रेनिंग दी जाए। शांति काल में तो फौजी भगवान सिद्ध होते हैं लेकिन खुदा ना खास्ता, सीमा पर तनाव के चलते यदि अधिसंख्य फौज वहां तैनात हो तो क्या हो? ऐसे में होमगार्ड, एनसीसी, एनएसएस व स्वयंसेवी संस्थाओं को दूरगामी योजनाओं पर काम करने के लिए सक्षम बनाना समय की मांग है। ❑

हमारे सामने दोहरी चुनौती

हमने नदी के कोप को रोकने के लिए तटबंध बना दिए। लेकिन वह भी कारगर न साबित हुआ। सबसे खराब स्थिति तो यह हुई कि इंसानी लोभ ने बाढ़ क्षेत्र में बस्तियां बसा लीं। शहरी भारत को ड्रेनेज का भान ही नहीं रहा। बाढ़ के पानी को निकालने वाला सिस्टम या तो बंद है या फिर है ही नहीं। हमारे ताल–तलैयों और पोखरों पर रियल इस्टेट का कब्जा हो चुका है। ऐसे हालात में अगर अप्रत्याशित बारिश होती है तो शहर डूबने लगता है। यही जम्मू–कश्मीर में भी हुआ है।

■ सुनीता नारायण

कहा जा रहा है कि जम्मू–कश्मीर में बाढ़ की विभीषिका से शुरू में लोग और सरकार अन्जान रहे। लेकिन ऐसा कैसे हुआ? हम सभी जानते हैं कि हर साल देश कुछ महीने सूखे से हलकान रहता है और कुछ महीने विनाशकारी बाढ़ के पानी से परेशान रहता है। इस साल भी इस वार्षिक चक्र से कोई राहत नहीं मिली बल्कि कुछ नई और आश्चर्यजनक घटनाएं हुई। हर साल बाढ़ का विनाशकारी रूप भयावह होता जा रहा है। हर साल बारिश अधिकाधिक परिवर्तनशील और प्रचंड रूप अख्तियार कर रही है। हर साल बाढ़ या सूखे के सीजन के कारण आर्थिक नुकसान बढ़ रहा है और विकास कार्यों को नुकसान हो रहा है।

वैज्ञानिक अब निष्कर्ष रूप में कहने लगे हैं कि मौसम के प्राकृतिक बदलाव और जलवायु परिवर्तन के बीच भेद है। मौसम का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिक बताते हैं कि उन्होंने सामान्य मानसून और असामान्य प्रचंड बारिश की घटनाओं के बीच भेद को पहचानना शुरू कर दिया है। उल्लेखनीय है कि मौसम को अस्थिर और अविश्वसनीय माना जाता है। इसके बावजूद वैज्ञानिक इस परिवर्तन को देख पा रहे हैं।

इस तथ्य ने मसले को और भी जटिल बना दिया है कि अनेक कारकों ने मौसम को प्रभावित किया है और कई अन्य कारकों ने इसकी उग्रता और प्रभाव पर असर डाला है। अन्य शब्दों में कहा जाये तो सूखा और बाढ़ जैसी प्रचंड दशाओं के कारण होने वाली तबाही का मसला जटिल है और इसमें स्त्रोतों का कुप्रबंधन और कमजोर योजना शामिल है। जम्मू–कश्मीर में आई बाढ़ वहां पर हुई अप्रत्याशित भारी बारिश के चलते हुई। गलत प्रबंधन के चलते हमने बाढ़ क्षेत्र की ड्रेनेज प्रणाली को खत्म कर दिया। हमने नदी के कोप को रोकने के लिए तटबंध बना दिए। लेकिन वह भी कारगर न साबित हुआ। सबसे खराब स्थिति तो यह हुई कि इंसानी लोभ ने बाढ़ क्षेत्र में बस्तियां बसा लीं। शहरी भारत को ड्रेनेज का भान ही नहीं रहा। बाढ़ के पानी को निकालने वाला सिस्टम या तो बंद है या फिर है ही नहीं। हमारे ताल–तलैयों और पोखरों पर रियल इस्टेट का कब्जा हो चुका है। ऐसे हालात में अगर अप्रत्याशित बारिश होती है तो शहर डूबने लगता है। यही जम्मू कश्मीर में भी हुआ है।

बाढ़ नियंत्रण के परंपरागत तरीके से हम हिमालय के पानी को झीलों और परस्पर जुड़े जल स्रोतों के माध्यम से नियंत्रित करते थे। श्रीनगर की डल और नगीन झीलें महज सौंदर्य स्थल नहीं हैं बल्कि शहर के सोख्ते की तरह हैं। बड़े इलाके का पानी इन परस्पर जुड़ी झीलों में आकर एकत्र होता था। प्रत्येक झील में जमाव से अधिक पानी के बहने या निकलने की व्यवस्था थी, लेकिन समय के साथ हम ड्रेनेज की कला भूल गए। अब हमें जमीन केवल मकानों के लिए दिखाई देती है पानी के लिए नहीं। श्रीनगर के निचले इलाकों में आवासीय भवन बना दिए गए। बाढ़ के पानी के निकलने वाले स्थान अतिक्रमण के भेंट चढ़ गए या फिर उपेक्षित पड़े रहे। ऐसे में जलवायु परिवर्तन के चलते हुई मौसम की अति सक्रिय दशाओं में वृद्धि के तहत जब भारी बारिश होती है तो पानी के निकलने का कोई स्थान नहीं बचता है। लिहाजा बाढ़ और विनाश अवश्यंभावी हो जाते हैं। इससे दोहरा संकट खड़ा हो जाता है। एक तरफ तो जलीय स्रोतों के कुप्रबंधन के कारण बाढ़ और सूखे की तीव्रता बढ़ती है। दूसरी तरफ जलवायु परिवर्तन के कारण प्रचंड मौसम की बढ़ती आवृत्ति ने देश में संकट को बढ़ाया है।

भारतीय जानते हैं कि मौसम उनका वास्तविक वित्त मंत्री है। स्पष्ट है कि इस अवसर के जरिये बारिश की हर बूंद का पैदावार और लंबे सूखे सीजन के लिए उपयोग किया जा सकता है। लेकिन इस तरह की बारिश अधिक उग्र घटना के रूप में सामने आती है। इसके लिए हमें तैयार रहने की जरूरत है। बारिश को चैनलीकृत और प्रबंधन राष्ट्र का मिशन होना चाहिए। यह भविष्य के लिए हमारा एकमात्र रास्ता है। इसका आशय है कि हर जल निकाय, चैनल और जलग्रहण की सुरक्षा की जानी चाहिए। आधुनिक भारत के ये मंदिर हैं। बारिश की पूजा करने के लिए इनको बनाया गया है। ❑

सामयिकी

बीमारू राज्यों की बीमारी शिक्षा

स्वतंत्रता के बाद राज्य की गरिमा को बढ़ाने के लिए कई राज्यों ने स्कूलों में उस राज्य की भाषा को शिक्षा का माध्यम चुना। मुख्यतः प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर मध्यमवर्ग का एक बड़ा हिस्सा अपने बच्चों को अंग्रेजी शिक्षा दिलाने के पक्ष में था, अतः उन्होंने अपने बच्चों को सरकारी स्कूलों से निकालकर प्राइवेट स्कूलों में दाखिल करवा दिया। ये निजी स्कूल कई तरह के थे – इतावली मोन्टेसरी शाखाएं, चर्चो द्वारा संचालित असंख्य स्कूल, लड़के और लड़कियों के लिए अलग–अलग कॉन्वेन्ट, निजी संस्थाओं और रामकृष्ण मिशन तथा चिन्मया शाखाओं द्वारा संचालित स्कूल।

■ निरंकार सिंह

साक्षरता और शिक्षा के मामले में भारत की गिनती दुनिया के पिछड़े देशों में होती है। यदि हम अपने देश की तुलना आसपास के देशों से करें तो चीन, श्रीलंका, म्यांमार, ईरान से भी पीछे हैं। हालांकि मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का वादा संविधान में किया गया है। इसे दस साल में पूरा करने का लक्ष्य भी तय किया गया था। लेकिन यह पूरा नहीं हो सका। इसके लिए सरकार के पास धन नहीं था। इसलिए राष्ट्रीय स्तर पर किसी ठोस योजना की शुरूआत नहीं हो सकी। राज्यों के स्तर पर अलग–अलग प्रयास किये गये।

स्वतंत्रता के बाद राज्य की गरिमा को बढ़ाने के लिए कई राज्यों ने स्कूलों में उस राज्य की भाषा को शिक्षा का माध्यम चुना। मुख्यतः प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर मध्यमवर्ग का एक बड़ा हिस्सा अपने बच्चों को अंग्रेजी शिक्षा दिलाने के पक्ष में था, अतः उन्होंने अपने बच्चों को सरकारी स्कूलों से निकालकर प्राइवेट स्कूलों में दाखिल करवा दिया। ये निजी स्कूल कई तरह के थे – इतावली मोन्टेसरी शाखाएं, चर्चो द्वारा संचालित असंख्य स्कूल, लड़के और लड़कियों के लिए अलग–अलग कॉन्वेन्ट, निजी संस्थाओं और रामकृष्ण मिशन तथा चिन्मया शाखाओं द्वारा संचालित स्कूल। यहां तक कि सरकारी कर्मचारी भी राज्य और नगर निगम के स्कूलों से दूरी बनाने लगे थे। केन्द्रीय विद्यालयों की स्थापना सरकारी राज्य सेवाकर्मियों के बच्चों के लिए और सैनिक स्कूलों की स्थापना मिलिटरी अफसरों के बच्चों के लिए हुई।

इस वजह से सरकारी स्कूल गरीबों और अशिक्षितों के बच्चों का सहारा बन गये, जहां उन्हें नौकरशाही और शिक्षक संघों की दया पर रहना पड़ता था। इसके परिणामस्वरूप इन स्कूलों के लिए स्थापित मानकों–पाठ्यपुस्तकों की गुणवत्ता और प्रासंगिकता, विद्यार्थियों की उपलब्धियों का निरीक्षण का विकास थम गया।

आज नब्बे प्रतिशत से ज्यादा सार्वजनिक खर्च की राशि भारतीय स्कूलों में अध्यापकों के वेतन और प्रशासन पर ही खर्च होती है। फिर भी विश्व में बिना अनुमति अवकाश लेने वाले अध्यापकों की संख्या भारत में सबसे अधिक है। हमारे स्कूलों में अध्यापक आते ही नहीं है और चार में से एक सरकारी स्कूल में रोज कोई न कोई अध्यापक छुट्टी पर होता है। हमारे यहां शिक्षा का जिम्मा राज्यों पर था, इसलिए सभी राज्यों ने इसकी चुनौतियों को अपने ढंग से हल किया। इसके अलग–अलग परिणाम सामने आए। जो राज्य स्कूलों में शिक्षा का विकास करने में सफल रहे उन्होंने गरीब बच्चों की शिक्षा सम्बन्धी चुनौतियों को प्राथमिकता दी। इसकी अगुवाई दक्षिण के राज्यों ने की, जिन्होंने सर्वशिक्षा में इतिहास रचा। मैसूर,

ट्रावणकोर, कोचीन और बड़ौदा जैसी दक्षिण रियासतें तो पहले से ही गरीबों के लिए शिक्षा पर जोर देती थीं और उनके महाराजाओं ने सर्वशिक्षा के लिए अनुदान और स्कूलों के लिए खजाने से राशि भी दी थी। ट्रावणकोर और कोचीन में प्रत्येक जाति के लिए आधारभूत शिक्षा के आग्रह ने 19वीं और 20वीं शताब्दी के किंडरगार्टन और प्राइमरी स्कूलों के समान पल्लीकुड़म और कुड़ीपल्लीकुडम की स्थापना में सहायता की।

इसका मतलब है कि स्वतंत्रता के बाद उत्तर की सरकारों से कहीं ज्यादा दक्षिण की सरकारों ने गरीबों के लिए शिक्षा पर जोर दिया। तमिलनाडु के मुख्यमंत्री के. कामराज ने मिड–डे मील स्कीम को राज्य के स्कूलों में लागू किया, जिसे सन् 1923 में मद्रास प्रेसीडेंसी ने प्रारम्भ किया था। इस योजना की जिम्मेदारी स्कूल के बच्चों को एक वक्त का भोजन, यूनीफार्म और पाठ्यपुस्तकें उपलब्ध कराना था। केरल में स्कूलों को विविध सुधारवादी आन्दोलनों से प्रेरणा मिली। इनकी अगुवाई चर्चो, नायरों और वामपंथी दलों ने की और राज्य ने स्कूलों को सर्वव्यापी बनाने पर जोर दिया। राज्य अपनी पहली विधानसभा में शिक्षा को मुफ्त और जरूरी बनाने सम्बन्धी संशोधन लाया और शिक्षा को सर्वव्यापी बनाने के लिए जल्दी ही उसने जमीनी संगठनों और अभिभावकों को इस मुहिम में अपने साथ कर लिया।

हालांकि, अन्य भारतीय राज्यों में शिक्षा का एक अलग ही चलन था। आज भारत के केवल छह राज्यों में ही दो–तिहाई बच्चे स्कूल नहीं जाते– आन्ध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल। इन राज्यों को जिन समस्याओं ने जकड़ा हुआ है यह है उनका इतिहास। जैसे बीमारू राज्यों में कई सार्वजनिक समस्याएं हैं जो अपने साथ राज्य की शिक्षा योजना को भी दूषित कर रही है। जमींदारी शैली के इतिहास के कारण इन राज्यों ने निर्दय जमींदारों और दास जैसे ऋणग्रस्त किसानों की एक विनाशकारी व्यवस्था का निर्माण किया। इससे इन समुदायों में कड़वाहट और गुस्से की परम्परा कायम हुई, जिसने एक ऐसी राजनीति को जन्म दिया जिसे 'बदले की राजनीति' कहते हैं, जो कि आज तक चली आ रही है। इन क्षेत्रों में ध्यान प्रतिशोध पर केन्द्रित रहता है और इन राज्यों में राजनीति से अभिप्राय है कि :आंखें मूंदकर अपने बड़ों के नक्शे कदम पर चलो' परिणामस्वरूप वे कहते हैं, 'यहां अभी तक मतदाताओं का शिक्षा के क्षेत्र में उपलब्धियों, स्वास्थ्य और बुनियादी ढांचे में निवेश के प्रति ज्यादा झुकाव नहीं है।'

इन राज्यों में ये जातिगत मतभेद स्कूलों में पैठ करने लगे, विशेष रूप से गांवों में, जहां स्कूलों को 'पिछड़े' और 'उच्च' वर्गो में बांट दिया गया है। इस अलगाव ने और भी भयानक रूप तब लिया जब राज्यों के निवेश भी जाति के अनुसार बंटने लगें। मंत्री अपनी जाति विशेष की पूर्ति के लिए काम करते रहे। इसलिए आप देख सकते हैं कि सरकारी स्कूल एक विशेष समुदाय क्षेत्र में ही बने, जहां 'अन्य जातियां' उसका लाभ नहीं उठा सकती। परिणामस्वरूप मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के ओबीसी और अनुसूचित जनजातियों के आधे गांवों में एक भी स्कूल नहीं है। ये अव्यवस्था में डूबे हुए राज्य जो स्कूली शिक्षा को ठंडे बस्ते में डाल देते हैं, वे इस क्षेत्र पर वार्षिक बजट का सबसे कम हिस्सा खर्च करते है। उन्होंने गरीब बच्चों के लाभ को नजरअंदाज किया जो कि कई सफल राज्यों में कारगर रहा था। इसलिए परिणाम निराशाजनक थे। पर अब जब सरकार हमारे प्राथमिक और माध्यमिक स्कूलों पर पहले से कहीं अधिक खर्च कर रही है, तब हम उस राशि को प्रभावशाली ढंग से इस्तेमाल करने के लिए संघर्षरत हैं। यदि यहां प्रगति करनी है तो हमें राजनैतिक तौर पर प्रखर प्रश्नों का जवाब देना होगा। उदाहरण के लिए शिक्षकों और प्रशासकों में जिम्मेदारी की समस्या के समाधान के बिना हमारे लिए स्कूलों के संकट का सामना करना नामुमकिन है। भारत सरकार ने इसे विकेन्द्रीकरण से हल करने का प्रयास किया है, जहां शिक्षक और प्रशासक की जिम्मेदारी राज्य सरकार के अन्तर्गत न होकर स्थानीय सरकारों अर्थात जिला परिषद या गांव पंचायतों के अन्तर्गत होती है। इसे हर सरकारी स्तर पर विरोध, स्थानीय और निर्वाचित वार्ड सदस्यों की जागरूकता की कमी और शिक्षक संघ के नितांत राजनैतिक प्रहारों के कारण मिली जुली सफलता मिली। ❑

भारतीय राज्यों में शिक्षा का एक अलग ही चलन था। आज भारत के केवल छह राज्यों में ही दो–तिहाई बच्चे स्कूल नहीं जाते– आन्ध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, यूपी और पश्चिम बंगाल। इन राज्यों को जिन समस्याओं ने जकड़ा हुआ है यह है उनका इतिहास। जैसे बीमारू राज्यों में कई सार्वजनिक समस्याएं हैं जो अपने साथ राज्य की शिक्षा योजना को भी दूषित कर रही है।

तिब्बत पर फिर से नहीं दिया गया ध्यान

तिब्बती भूभाग अपने पूरे इतिहास काल में भारतीय और चीनी सभ्यता द्वारा पृथक रहा है। सांस्कृतिक और धार्मिक रूप से भी इसका संबंध चीन से बहुत कम रहा है और राजनीतिक संबंध तो कभी रहा ही नहीं। चीन द्वारा तिब्बत को जबरन हड़पे जाने के बाद ही चीनी सेना की टुकड़ियां भारत के हिमालयी सीमावर्ती इलाकों में पहली बार दाखिल हुई। इस घटना का ही परिणाम था कि 1962 में हिमालय पार करके चीन ने खूनी युद्ध को अंजाम दिया।

■ ब्रह्मा चेलानी

चीन ने वर्ष 1950 में तिब्बत को हड़प लिया या कहें अपने में मिला लिया। हालांकि अभी भी यह मुद्दा भारत–चीन की समस्याओं का मुख्य केंद्र है, जिसमें भौगोलिक विवाद, सीमा तनाव और जल विवाद शामिल हैं। बीजिंग ने स्वयं तिब्बत मसले को एक बड़ा मुद्दा बनाते हुए भारत के एक बड़े भूभाग पर दावा किया है और कहा है कि इन भूभागों का संबंध तिब्बत से है। जब चीनी राष्ट्रपति शी चिनफिंग पिछले सप्ताह भारत की यात्रा पर थे तो तिब्बत को लेकर बहुत कुछ लिखा और कहा गया।

वास्तव में देखा जाए तो शी चिनफिंग की यात्रा बहुत हद तक परंपरागत भारत–तिब्बत सीमा में चीनी सेना की घुसपैठ के साये में संपन्न हुई। पिछले कई वर्षो से हो रही घुसपैठ के मद्देनजर इस बार चीनी सैनिकों की संख्या काफी अधिक थी। कहीं ऐसा तो नहीं कि शी चिनफिंग ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को जन्मदिन के उपहार के तौर पर भारत को कड़ा संदेश देने के लिए यह समय चुना अथवा निर्धारित किया।

मोदी सरकार ने नई दिल्ली में शी चिनफिंग की यात्रा के दो दिनों के दौरान तिब्बत के निर्वासितों को विरोध प्रदर्शन की अनुमति दी। इसमें शिखर बैठक के पास का स्थान भी शामिल है। यह विरोध प्रदर्शन 1990 की शुरुआत में होने वाले कड़े विरोध प्रदर्शनों से अलग था जब पुलिस किसी भी महत्वपूर्ण चीनी व्यक्ति के आगमन पर ऐसे किसी भी विरोध प्रदर्शनों को नाकाम अथवा विफल बनाने की कोशिश करती थी।

वास्तव में मनमोहन सिंह के ही एक दशक लंबे शासन के दौरान पुलिस ऐसी किसी स्थिति में दिल्ली में स्थित तिब्बतियों के घरों के आसपास वाले इलाकों को बंद करा देती थी और रैली की कोशिश करने पर उन्हें बुरी तरह पीटती थी। इस तरह का क्रूर बर्ताव बहुत हद तक चीन के एकाधिकारवादी शासन से मेल खाता था, लेकिन यह उस देश के लिए शोभा नहीं देता जो खुद को दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र कहता हो। ऐसी किसी भी घटना के दौरान प्रदर्शनकारियों का मुंह बंद कराने पर चीन से भारत को कोई सकारात्मक जवाब नहीं मिला। इसलिए यह बदलाव स्वागतयोग्य है कि भारत ने बड़ी तादाद में तिब्बती प्रदर्शनकारियोंको अपने वैध लोकतांत्रिक अधिकारों को अभिव्यक्त करने की मान्यता अथवा स्वीकृति दी। यहां तक कि खुद दलाई लामा ने भी शी चिनफिंग की यात्रा के दौरान अपनी बात कहने में अधिक सहजता महसूस की।

> **प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने 1954 में तिब्बत पर ब्रिटिश शासकों द्वारा दिए गए अतिरिक्त अधिकार को छोड़ दिया और तिब्बत को चीन के तिब्बत क्षेत्र के तौर पर मान्यता दे दी। हालांकि उस समय तक बीजिंग ने भारत–तिब्बत सीमा को मान्यता नहीं दी थी। उन्होंने यह काम एक समझौते पर हस्ताक्षर करके किया और इसे तिब्बती बौद्ध दर्शन के मुताबिक पंचशील नाम दिया।**

उन्होंने भारतीयों को याद दिलाया कि तिब्बत की समस्या वास्तव में भारत की भी समस्या है। चीन के खिलाफ होने वाला तिब्बती प्रदर्शन हालांकि शांतिपूर्ण होता है, जिसे खुद भारतीय संस्थान ही अनुमति देता है।

मई में जब मोदी ने पदभार ग्रहण किया तो तिब्बत की निर्वासित सरकार के प्रधानमंत्री लोबसांग सांग्ये को भी इसमें आमंत्रित किया गया था। इसलिए शी चिनफिंग ने मोदी से यह आश्वासन मांगा कि वह तिब्बत को चीन के हिस्से के तौर पर मान्यता दें। चीन के विदेश मंत्रालय के मुताबिक प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि तिब्बत चीन का आंतरिक हिस्सा है और भारत अपनी जमीन से किसी भी अलगाववादी गतिविधि को अनुमति नहीं

देगा। निश्चित ही यह आश्वासन निजी बातचीत में दिया गया, क्योंकि मोदी ने इस विषय पर सार्वजनिक रूप से कुछ भी नहीं बोला है।

विस्तृत रूप में फैला हुआ तिब्बती भूभाग अपने पूरे इतिहास काल में भारतीय और चीनी सभ्यता द्वारा पृथक रहा है। सांस्कृतिक और धार्मिक रूप से भी इसका संबंध चीन से बहुत कम रहा है और राजनीतिक संबंध तो कभी रहा ही नहीं। चीन द्वारा तिब्बत को जबरन हड़पे जाने के बाद ही चीनी सेना की टुकड़ियां भारत के हिमालयी सीमावर्ती इलाकों में पहली बार दाखिल हुई। इस घटना का ही परिणाम था कि 1962 में हिमालय पार करके चीन ने खूनी युद्ध को अंजाम दिया। तिब्बत के पतन से आधुनिक भारत का इतिहास भू–राजनीतिक रूप से बदल गया। बावजूद इसके प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने 1954 में तिब्बत पर ब्रिटिश शासकों द्वारा दिए गए अतिरिक्त अधिकार को छोड़ दिया और तिब्बत को चीन के तिब्बत क्षेत्र के तौर पर मान्यता दे दी। हालांकि उस समय तक बीजिंग ने भारत–तिब्बत सीमा को मान्यता नहीं दी थी। उन्होंने यह काम एक समझौते पर हस्ताक्षर करके किया और इसे तिब्बती बौद्ध दर्शन के मुताबिक पंचशील नाम दिया।

वर्षों बाद एक अन्य भारतीय प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने एक बार और औपचारिक तौर पर भारत के हाथ में मौजूद तिब्बत कार्ड को चीन को समर्पित करने का काम किया। वाजपेयी की 2003 में बीजिंग यात्रा के दौरान चीनी सरकार ने उनसे असंदिग्ध तौर पर तिब्बत को चीन का हिस्सा होने की स्वीकृति हासिल की। वाजपेयी ने पहली बार इसे वैध शब्दावली

प्रदान करते हुए भारत की स्वीकृति अथवा मान्यता दी, जिसे चीन तिब्बत स्वायत्तशासी क्षेत्र कहता है। चीन इसे अपने भूभाग का आंतरिक हिस्सा बताता है। वाजपेयी के इस आत्मसमर्पण अथवा समझौते ने चीन को भारत के एक बड़े उत्तरपूर्वी क्षेत्र अरुणाचल प्रदेश (ताइवान से तीन गुना बड़ा) पर अपना दावा करने का मौका दिया।

वर्ष 2006 से चीन इसे दक्षिण तिब्बत नाम से पुकारता है। इसी तरह चीन ने जम्मू–कश्मीर के भारतीय हिस्से पर उसकी संप्रभुता को लेकर सवाल उठाना शुरू किया। इसका एक तिहाई हिस्से से अधिक भाग पाकिस्तान के पास है तो पांचवां भाग चीन ने कब्जा रखा है। इस तरह के हालात ने चीनी सेना को बार–बार घुसपैठ के लिए बल दिया। 2010 से भारत ने तिब्बत का उल्लेख करना बंद कर दिया है और चीन के साथ संयुक्त बयानों में 'एक चीन' शब्द का उल्लेख किया जाता है।

फिर से एक गड़बड़ी यह हुई कि मोदी–शी के संयुक्त बयान में पिछले दरवाजे से तिब्बत का मुद्दा लाया गया और चीनी तिब्बत स्वायत्तशासी क्षेत्र की स्थानीय सरकार को धन्यवाद दिया गया। इस संयुक्त बयान में भारतीय पक्ष की ओर से भारतीय तीर्थयात्रियों को कैलाश मानसरोवर की यात्रा के लिए चीनी तिब्बती स्वायत्तशासी क्षेत्र की स्थानीय सरकार और विदेश मंत्रालय के सहयोग और समर्थन के लिए प्रशंसा की गई है। बहुत चतुराई से उन शब्दों का प्रयोग किया गया है जैसा कि बीजिंग चाहता था, जबकि 2013 में चीन के प्रधानमंत्री की भारत यात्रा के समय संयुक्त बयान में कहा गया था भारतीय तीर्थयात्रियों की दी जाने वाली सुविधा में सुधार के लिए भारतीय पक्ष चीनी पक्ष की सराहना करता है। शब्दों में यह बदलाव आखिर किसकी गलती से हुआ और क्या इसके लिए मोदी और विदेश मंत्री सुषमा स्वराज से अनुमति ली गई थी।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी को अपने पूर्ववर्तियों की गलतियों में सुधार करना चाहिए। वास्तव में भारत को चाहिए कि वह चीन पर तिब्बत से मेल–मिलाप के लिए दबाव डाले अन्यथा तिब्बत मसला भारत–चीन विभाजन का मुख्य मुद्दा बना रहेगा। ❑

मंगल ग्रह पर पड़े भारत के कदम

24 सितम्बर की सुबह भारत के लिए अंतरिक्ष में कामयाबी का दिन रहा। इसके साथ ही भारत मंगल ग्रह की कक्षा में अपने यान को पहले ही प्रयास में सफलता स्थापित करने वाला दुनिया का पहला देश बना गया। साथ ही वह एशिया का भी पहला देश है जिसने यह कामयाबी हासिल की। अमरीका और रूस जैसे बड़े देश ने कई बार नाकामी के बाद जो सफलता हासिल की उसे भारत ने पहले प्रयास में कर दिखाया। मार्स आर्बिटर मिशन की सफलता ने भारत को मंगल ग्रह तक पहुंचने वाला दुनिया का चौथा देश बन गया है। 450 करोड़ रुपए की लागत वाला मंगलयान अपनी श्रेणी का सबसे कामयाब और किफायती अभियान है। यह यान उपकरणों के साथ छह महीने तक मंगल ग्रह की कक्षा में घूमता रहेगा।

'स्वच्छ भारत' अभियान से जुड़े बिल गेट्स

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के महत्वाकांक्षी 'स्वच्छ भारत' मिशन से माइक्रोसाफ्ट के संस्थापक बिल गेट्स भी जुड़ गए हैं। बिल गेट्स ने सामुदायिक स्वच्छता पहल पर मोदी द्वारा ध्यान दिए जाने की सराहना की और विशेष रूप से शौचालयों पर ध्यान केंद्रित करने के उनके प्रयासों को सराहा जो बाल स्वास्थ्य का महत्वपूर्ण कारक एवं महिलाओं तथा बालिकाओं की गरिमा एवं सुरक्षा में एक विशेष तत्व है। 15 अगस्त के भाषण में प्रधानमंत्री ने स्वच्छता की जरूरत पर जोर दिया था। और दो अक्टूबर को शुरू भी कर दिया इस का लक्ष्य को वर्ष 2019 तक पूरा किया जाएगा। बिल गेट्स फाउंडेशन चार क्षेत्रों में भारत का सहयोग करेगा जिनमें शौचालयों के संबंध में नवोन्मेषी प्रौद्योगिकी प्रदर्शन और सीवेज प्रबंधन, विकेंद्रीकृत सीवेज प्रणाली और शौचालयों के इस्तेमाल को बढ़ावा देना शामिल है। ❑

भारतीय सीईओ को तरजीह दे रहे विदेशी

सिंगापुर की एक नियुक्ति सेवा कंपनी के सर्वेक्षण से यह बात सामने आई है कि विकसित देशों की कंपनियां भारतीय कार्यकारियों अर्थात् सीईओ पर भरोसा कर रही हैं। ये कंपनियां अपने निदेशक मंडल में एशियाई निदेशकों को नियुक्त कर रही है। कार्यकारियों को शीर्ष भूमिका में नियुक्त करने में मदद करने वाली विशेषज्ञ कंपनी डीटीसीए ने दुनिया की चार प्रमुख अर्थव्यवस्था वाले देशों – अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी तथा ब्रिटेन में काम कर रही 20 बड़ी कंपनियों के निदेशक मंडलों का विश्लेषण किया। इन कंपनियों में गैर कार्यकारी निदेशक की हैसियत रखने वाले एशियाई कार्यकारियों की संख्या बढ़कर 23 हो गई जो 2009 में नौ थी। इसमें भारतीय कार्यकारी आगे हैं। इन 23 में 8 भारतीय हैं जो बहुराष्ट्रीय कंपनियों (एमएनसी) में उच्च पदों पर हैं। देखा जाए तो पिछले पांच साल में यह प्रवृत्ति बढ़ी है क्योंकि पश्चिम देशों की कंपनियां भारत में विस्तार पर ध्यान दे रही हैं। इसलिए बहुराष्ट्रीय कंपनियां अपने यहां एशियाई कार्यकारियों को नियुक्त कर रही हैं ताकि उन्हें अपने लक्ष्यों को हासिल करने में मदद मिल सके। ❑

विदेशी कर्ज 12.6 अरब डालर बढ़ा

देश का बाह्य कर्ज जून तिमाही में 12.6 अरब डालर बढ़कर 346.6 अरब डालर हो गया है। देश में विदेशियों के स्वामित्व वाली संपत्ति का मूल्य बढ़ने के साथ यह कर्ज बढ़ा है। रिजर्व बैंक के आंकड़ों के अनुसार देश पर प्रवासियों का शुद्ध दावा जून तिमाही में इससे पूर्व तिमाही के मुकाबले 12.6 अरब डालर बढ़कर 346.6 अरब डालर पहुंच गया। केंद्रीय बैंक के अनुसार इसका कारण देश में विदेशियों के स्वामित्व वाली संपत्ति के मूल्य में 22.9 अरब डालर का इजाफा होना है। वहीं दूसरी तरफ विदेशों में भारतीयों की संपत्ति का मूल्य 10.4 अरब डालर बढ़ा। ❑

भारत वर्ष 2030 तक शीर्ष निर्यातकों में शामिल होगा

एचएसबीसी के व्यापार की रपट में कहा गया है कि भारत में मूल्य के लिहाज से 2030 तक विश्व की पांचवीं सबसे बड़ा निर्यातक बनने की क्षमता है। भारत में वाहन निर्यात का केंद्र बनने की क्षमता है और यह कपड़ा उद्योग को और अधिक विकसित करने की स्थिति में है। ऐसा तब कहा गया है जबकि भारत की वृद्धि निकट भविष्य में कम ही रहने के आसार है। वर्ष 2014 में अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर 5.3 प्रतिशत और 2015 में यह 6.3 प्रतिशत रह सकती है जो 2001–11 के बीच रही करीब 8 प्रतिशत की औसत वृद्धि दर से बहुत कम है।

रपट में कहा गया है, वृद्धि के आड़े आने वाली कई ढांचागत बाधाओं के बावजूद मध्यम अवधि में व्यापार में वृद्धि मजबूत रहने की उम्मीद है। ❑

मोबाइल बैंकिंग से लेनदेन में तीन गुना वृद्धि

आज देश में मोबाइल बैंकिंग का इस्तेमाल तेजी से बढ़ रहा है। वर्ष 2013–14 में करीब तीन गुना की वृद्धि दर्ज की गई है जबकि चार करोड़ मोबाइल उपभोक्ता ही इसका उपयोग कर रहे हैं।

रिजर्व बैंक के आंकड़ों वर्ष 2012–13 के दौरान जहां मोबाइल बैंकिंग का इस्तेमाल कर 59 अरब 90 करोड़ रुपए का लेनदेन हुआ जो वर्ष 2013–14 में 224 अरब 38 करोड़ रपए पर पहुंच गया। वर्ष 2011–12 में यह राशि 18 अरब 21 करोड़ रुपए रही थी। रिजर्व बैंक के अनुसार अभी मोबाइल बैंकिंग की पहुंच और बढ़ाए जाने की जरूरत है। देश में कुल 90 करोड़ मोबाइल फोन उपभोक्ता हैं जिनमें केवल चार करोड़ ही मोबाइल बैंकिंग सेवा का लाभ उठा रहे हैं। हालांकि वर्ष 2012–13 और 2013–14 के दौरान इसमें क्रमशः 73.69 और 57.84 फीसद की बढ़ोतरी दर्ज की गई है। ❑

घट रही है देश में गरीबों की संख्या

देश की जनता आज भी महंगाई कम होने का इंतजार कर रही है परन्तु अभी हाल ही में संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट में यह बताया गया कि भारत में भूख की मार झेल रहे लोगों की संख्या 9.5 प्रतिशत घटकर 19.07 करोड़ पर आ गई जो दो दशक पहले 21.08 करोड़ थी। दूसरी ओर पड़ोसी देश पाकिस्तान में ऐसे लोगों की संख्या में 38 प्रतिशत तक बढ़ गई है।

रिपोर्ट में सबसे अधिक भूखे लोगों के मामले में भारत 19.07 करोड़ अलग स्थान रखता है। जबकि पाकिस्तान में भूखे लोगों की संख्या 3.96 करोड़ है, बांग्लादेश में 2.62 करोड़, श्रीलंका में 52 लाख और नेपाल में 36 लाख है। यह रिपोर्ट संयुक्त रूप से संयुक्त राष्ट्र की संस्था एफएओ, कृषि विकास हेतु अंतरराष्ट्रीय कोष और विश्व खाद्य कार्यक्रम द्वारा तैयार की गई है। रिपोर्ट के अनुसार अभी भी भारत और उसके पड़ोसी देश गरीबी कम करने और विकास के एक न्यूनतम स्तर को हासिल करने के लिए संयुक्त राष्ट्र द्वारा 21वीं शताब्दी के शुरू में तय मिलेनियम डेवलपमेंट गोल (एमडीजी) के तहत वर्ष 2015 तक भूखे लोगों की संख्या आधी करने के लक्ष्य से काफी पीछे हैं। ❑

देश में चालू कंपनियों की संख्या 9.87 लाख

हाल ही में चुनी हुई केन्द्र सरकार जहां मेक इंडिया पर जोर दे रहे हैं वहीं दूसरी ओर देश की 27,218 कंपनियां बंद होने की प्रक्रिया में चल रही है। हाल ही में मंत्रालय के आंकड़ों के अनुसार 31 अगस्त तक चालू कंपनियों की संख्या 9.87 लाख रही। जबकि 1.27 लाख कंपनियां ऐसी हैं जिनका गठन पिछले डेढ़ साल में ही हुआ है। मंत्रालय की मासिक पत्रिका में बताया गया कि 31 अगस्त, 2014 तक कंपनी कानून के तहत पंजीकृत कंपनियों की संख्या 14.16 लाख रही। जबकि 2.59 लाख कंपनियां बंद हो चुकी हैं और 27,218 कंपनियों को बंद करने की प्रक्रिया भी चल रही है। ❑

जी-20 कर सूचनाओं के आदान-प्रदान को राजी

जी–20 ने विभिन्न देशों के बीच कर सूचना के स्वतः आदान–प्रदान के लिए 2017 तक व्यवस्था स्थापित करने का निर्णय कर लिया है। इस निर्णय से भारत को विदेशों में रखे गए काले धन की समस्या से निपटने में मदद मिलेगी। मौजूदा व्यवस्था के तहत संदिग्ध कर चोरी या अन्य वित्तीय अपराधों के मामलों में अनुरोधों के आधार पर सूचना का आदान–प्रदान होता है। पेरिस स्थित आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (ओईसीडी) द्वारा जुलाई में तैयार नया नियंत्रण मानक सभी देशों के लिये होगा। इससे बड़े करदाताओं के बारे में उनकी आय के स्रोत वाले देश से करदाता के निवास वाले देश को सूचनाओं के व्यवस्थित और निश्चित अंतराल पर उपलब्ध कराने का रास्ता साफ होगा। भारत कर चोरी रोकने के इरादे से इससे जुड़े मुद्दों तथा सूचना के स्वतः आदान–प्रदान को प्रमुखता से उठाता रहा है। ❑

निवेशक हुए मालामाल

शेयर बाजार निवेशकों की संपत्ति इस साल अब तक 23.33 लाख करोड़ रपए से अधिक बढ़ गई। इस दौरान सेंसेक्स में 25.49 फीसद का उछाल आने से बंबई शेयर बाजार में सूचीबद्ध कंपनियों का बाजार पूंजीकरण बढ़कर 94 लाख करोड़ रपए के करीब पहुंच गया। पिछले साल निवेशकों की संपत्ति एक लाख करोड़ रपए बढ़कर 70,44,431 करोड़ रपए हुई थी। विशेषज्ञों का कहना है कि केंद्र में नई सरकार के आने तथा अच्छे खासे विदेशी धन प्रवाह से घरेलू इक्विटी बाजारों में तेजी का रुख है। ❑

ऑनलाइन किराना शॉप का बढ़ता चलन

आज देश में इंटरनेट उपभोक्ताओं की संख्या में इजाफा हो रहा है। इसको देखते हुए अब ऑनलाइन किराना दुकानों की संख्या में तेजी से इजाफा भी हो रहा है। इस वर्ष ऐसी दुकानों की संख्या अब तक बढ़कर 44 हो गई है जो पिछले बीते वर्ष 2013 में 14 थी। उपरोक्त बात अमेरिकी कृषि विभाग (यूएसडीए) की ताजा रपट में कही गई है।

ऑनलाइन किराना दुकानों की संख्या बढ़ने से अब खुले बाजारों की खुदरा किराना दुकानों को भारी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। इस समय 44 ऑनलाइन किराना दुकानें अपना कारोबार कर रही है। एक औसतन इस समय ऑनलाइन शापिंग 20 करोड़ से ज्यादा लोग कर रहे जो इंटरनेट पर अपना ऑर्डर बुक कराते है और घर बैठे सामान पा लेते है। वही दूसरी ओर किराना दुकानदार ऑनलाइन किराना शॉप पर रोक लगाने की बात कह रहे है, इससे देश में लोगों का रोजगार छिन रहा है। ❑

सवा लाख नौकरी देगा रिलायंस समूह

मेक इन इंडिया के अभियान के शुभारंभ के मौके पर रिलायंस समूह के चेयरमैन एवं प्रबंध निदेशक मुकेश अंबानी ने कहा कि उनकी कंपनी 1.8 लाख करोड़ रुपए के निवेश के नतीजे से एक से सवा साल में दिखने लगेंगे। जिससे 1.25 लाख रोजगार के अवसरों का सृजन होगा।

उन्होंने कहा कि भारत में बनाओ अभियान की सफलता के लिए जरूरी है कि दुनियाभर से पूंजी व विशेषज्ञता को खोला जाए। आज यह महत्वपूर्ण है कि गांवों के कलस्टर को न केवल घरेलू बल्कि अंतरराष्ट्रीय बाजारों से जोड़ा जाए, जिससे भौतिक व आभासी ढांचा बन सके और हमारी सभी वस्तुएं व सेवाएं सभी बाजारों से जुड़ सकें। ❑

मजबूत हुई कारोबारी धारणा

देश में स्थिर एवं विकासनोन्मुख सरकार बनने के बाद से कारोबारी धारण में मजबूती का रुख बना हुआ है और यह लगातार दूसरी तिमाही सुधरकर 15 तिमाही के उच्चतम स्तर पर पहुंच गया है। भारतीय उद्योग एवं वाणिज्य महासंघ (फिक्की) और भारतीय उद्योग परिसंघ (सीआईआई) जारी कारोबारी धारणा सर्वेक्षण रिपोर्ट में लगातार दूसरी तिमाही में कारोबारी भरोसा उच्चतम स्तर पर पहुंच गया है। फिक्की के अनुसार कुल मिलाकर कारोबारी भरोसा पिछली तिमाही के 69.0 अंक से बढ़कर 72.7 अंक पर पहुंच गया है जो 15 तिमाही का उच्चतम स्तर है। सर्वेक्षण रिपोर्ट में बताया गया कि वर्तमान स्थिति सूचकांक बढ़कर 65.4 अंक पर पहुंच गया है जबकि पिछली तिमाही में यह 57.8 अंक पर रहा था। फिक्की और सीआईआई के सर्वेक्षणों में विभिन्न क्षेत्रों के 150 – 150 उद्यमी शामिल हुए। परिसंघ की रिपोर्ट के अनुसार मानूसन के कमजोर रहने से चालू वित्त वर्ष में औसत थोक मूल्य सूचकांक पर आधारित महंगाई 5.5 से 6.5 प्रतिशत के बीच रह सकती है। ❑

जनधन योजना में खुले 5 करोड़ से अधिक खाते

प्रधानमंत्री जनधन योजना के तहत 25 सितम्बर तक पांच करोड़ से अधिक खाते खोल चुके है और जमा के रूप में 3500 करोड़ रुपए प्राप्त हुए है। यह बात वित्तीय सेवा सचिव जी एस संधु ने एक प्रेस कांफ्रेस में कही। उन्होंने कहा कि 5.1 करोड़ खाते खोलने का मतलब है कि लक्ष्य का 70 फीसद हिस्सा पूरा हो गया है। सरकार ने जनवरी 26 जनवरी 2015 तक 7.5 करोड़ खाते खोलने का लक्ष्य रखा है। रिजर्व बैंक के गवर्नर रघुराम राजन ने योजना के क्रियान्वयन की गति को लेकर चिंता जताई थी। उन्होंने इस महीने की शुरुआत में बैंक अधिकारियों की एक बैठक में कहा था, 'हमें यह सुनिश्चत करना है कि योजना पटरी से नहीं उतरे। हमें केवल गति और संख्या पर बल नहीं देना चाहिए।' एक ही व्यक्ति के कई खाते खुलने के संबंध में में संधु ने कहा कि बैंक आधार संख्या के आधार पर खाते खोल रहे हैं और यह खाताधारक के बायोमेट्रिक ब्योरे से जुड़ा है, ऐसे में इसके दोहराव की आशंका नहीं है। ❑

भारत में भारी निवेश करेंगी चीनी कंपनियां

चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग की भारत यात्रा के दौरान चाइनीज कंपनियों ने भारत के इंफ्रास्ट्रक्चर क्षेत्र में भारी निवेश करार हुआ। भारत और चीन की कंपनियों के बीच 3.43 अरब डॉलर यानि 20 हजार करोड़ रुपये के निवेश से जुड़े 24 समझौतों पर हस्ताक्षर हुए। रिलायंस कम्युनिकेशन ने भी चीन की दिग्गज टेक्नोलॉजी कंपनी हुवावे और जेडटीई के साथ करार किया है। ❑

भारत ने अमरीका से क्या पाया...?

मोदी ने अपनी इस अमेरिका यात्रा के दौरान यह सिद्ध कर दिया कि वे जनसंपर्क कला के महान कलाकार हैं और उन्होंने आशाओं के द्वार खोल दिए हैं. . .चीनी राष्ट्रपति की भारत यात्रा के निष्कर्ष भी कुछ इसी तरह के हैं। जापान के साथ ठोस उपलब्धियां हुई हैं, लेकिन अमेरिका और चीन जैसी महाशक्तियों के साथ थोड़ा धैर्य रखना पड़ेगा।

■ डॉ. वेदप्रताप वैदिक

प्रधानमंत्री मोदी की अमेरिका यात्रा में भारत ने क्या खोया, क्या पाया यह सवाल सभी सुधीजन खुद से पूछ रहे हैं। यह सवाल के यदि संपूर्ण विदेश नीति के संदर्भ में रखकर पूछें तो यह ज्यादा अर्थवान हो जाता है। अभी तक मोदी 'ब्रिक्स' में हुई भेंटों के अलावा भूटान, जापान, चीन और अमेरिका के नेताओं से मिले हैं। इन भेंटों में से भारत के लिए क्या निकला और आगे क्या निकलने की संभावनाएं हैं? हमारी कुल विदेश नीति की दिशा क्या है?

जहां तक मोदी की अमेरिकी यात्रा का प्रश्न है, इसे हम अपूर्व जनसंपर्क कह सकते हैं। न्यूयार्क में सेंट्रल पार्क और मेडिसन चौराहे पर भारत के तो क्या, किसी भी देश के नेता ने कभी इतनी बड़ी भीड़ को संबोधित नहीं किया। उन जनसभाओं में दर्जनों कांग्रेसमैन और सीनेटरों की उपस्थिति भी बड़ी घटना थी। दोनों सभाओं को दो करोड़ लोगों ने चैनलों पर देखा और अखबारों में पढ़ा। क्या इसका असर अमेरिकी नीति–निर्माताओं पर नहीं पड़ा होगा?

मोदी का धाराप्रवाह और मनमोहक भाषण वहां उपस्थित श्रोताओं को तो भाव–विभोर कर ही रहा था, उसने भारत के करोड़ों श्रोताओं में भी मोदी के नेतृत्व का सिक्का जमाने का काम किया। जिन मोदी को अमेरिका वीजा नहीं दे रहा था, उन्हीं मोदी ने प्रत्येक अमेरिकी नागरिक को हवाई अड्डे पर वीजा देने की घोषणा कर दी और प्रवासी भारतीयों को भी स्थायी वीजा का वचन दे दिया। पिछले भारतीय प्रधानमंत्रियों की यात्राओं को अमेरिकी प्रचार तंत्र अक्सर कोनों में खिसका देता था, लेकिन अमेरिकी सरकार और अखबार दोनों ने इस यात्रा को पर्याप्त महत्व दिया।

प्रधानमंत्रियों का संयुक्त राष्ट्र में दिया भाषण तो परंपरागत होता है, लेकिन इस बार मोदी ने आतंकवाद, गरीबी–निवारण, पर्यावरण रक्षा तथा कुछ अन्य अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं पर सर्वसम्मति की बात कही, जो जरा नई थी। सबसे बड़ी बात यह कि उन्होंने पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ के साथ चोचें नहीं लड़ाईं। वे चाहते तो मियां नवाज की कश्मीर में जनमत–संग्रह करवाने की मांग पर काफी बरस सकते थे, लेकिन उन्होंने उसका हल्का–सा खंडन किया और पाकिस्तान से सार्थक संवाद को अपनी नीति बताया।

मोदी के अमेरिका में रहते हुए पाकिस्तान से संवाद का टूटा तार दुबारा जुड़ सकता था, क्योंकि उसके (विदेश मंत्री तुल्य) सरताज अजीज ने विदेश सचिव वार्ता के भंग होने पर अच्छी लीपा–पोती कर दी थी। मोदी ने अन्य तीन पड़ोसी नेताओं से बात की यह अच्छा रहा, लेकिन अपने सबसे टेढ़े पड़ोसी पाकिस्तान से बात करने का मौका गंवा दिया। मोदी ने अपने भाषण हिंदी में देकर विदेश नीति में भारत की जनता की हिस्सेदारी तय की। वे ऐसे पहले प्रधानमंत्री हैं, जिन्होंने अ–हिंदीभाषी होते हुए भी अपने भाषण और कूटनीतिक संवाद हिंदी में किए। उन्होंने हिंदी का मान बढ़ाया। उन्होंने अटलजी की परंपरा को आगे बढ़ाया और ऊंचा उठाया।

यह तो हुआ जनसंपर्क और प्रचारवाला हिस्सा! इसमें तो हम मोदी को 100 में से 100 गुणांक दे सकते हैं, लेकिन जो असली मामला है, भारत–अमेरिका संबंध, उसमें मोदी को कितनी सफलता मिली, इस बारे में अभी कुछ कहना मुश्किल है। अगर हम यह मान लें कि भारत–अमेरिकी द्विपक्षीय संबंधों को मोदी एक कदम भी आगे नहीं बढ़ा पाए तो भी न तो मोदी का कुछ बिगड़ा और न ही भारत का! क्योंकि संयुक्त राष्ट्र के सालाना अधिवेशन में दर्जनों देशों के प्रधानमंत्री न्यूयॉर्क पहुंचते हैं और उन्हें अमेरिकी राष्ट्रपति से हाथ मिलाने का मौका भी नहीं मिलता है। मोदी को राष्ट्रपति ओबामा ने दो बार भोजन के लिए बुलाया और ब्लेयर हाउस के विशेष सरकारी आवास में ठहराया। अमेरिकी उप–राष्ट्रपति और रक्षामंत्री ने उन्हें मध्याह्न भोजन भी दिया।

यह ठीक है कि अमेरिका के साथ अधर में लटके कई द्विपक्षीय मुद्दे ज्यों के त्यों हैं। जैसे परमाणु सौदे में दुर्घटना होने पर हर्जाने का प्रावधान, नई–नई रक्षा–उत्पादन तकनीकें, उन्नत हेलिकाप्टरों की खरीद, परमाणु सप्लायर्स क्लब में भारत के प्रवेश और सुरक्षा परिषद की

स्थायी सदस्यता पर अमेरिकी रवैया तथा बौद्धिक संपदा अधिकार आदि। इसके अलावा प्रवासी भारतीयों के लिए चिंता का विषय बना हुआ एच–1 वीजा और उन पर लगने वाले टैक्स वगैरह के मामलों पर कोई ठोस समाधान नहीं निकला। न ही इन्हें हल करने के लिए कोई कूटनीतिक प्रक्रिया तय की गई। इन तथ्यों के आधार पर कांग्रेस ने मोदी की अमेरिका यात्रा को 'निराशाजनक' बताया है, लेकिन मेरा विचार तो यह है कि मोदी की अमेरिका–यात्रा के लिए अगर कोई एक शब्द कहना हो तो मैं कहूंगा कि वह चाहे जैसी रही हो, वह आशाजनक तो निश्चय ही है। वह आशाजनक तो कई कारणों से है। पहला कारण तो यही है कि ओबामा और मोदी में सीधा संवाद हुआ। पिछले दो–तीन साल से हमारे संबंधों में जो ठहराव आ गया था, उसमें रवानी पैदा हुई। दोनों ने 'वॉशिंगटन पोस्ट' में संयुक्त लेख लिखा। क्या पहले कभी ऐसा हुआ?

दोनों देशों के संयुक्त वक्तव्य के 3500 शब्दों में संबंधों की सारी रामायण आ गई। दोनों लोकतंत्र हैं, दोनों शान्तिकामी हैं, दोनों विकासवादी हैं, दोनों का व्यापार कई गुना बढ़े, शिक्षा, चिकित्सा, तकनीक, शस्त्र निर्माण आदि में सहयोग बढ़ेगा। संयुक्त राष्ट्र के पुनर्गठन में दोनों मिलकर काम करेंगे। सबसे बड़ी बात दुनिया के कई आतंकवादी संगठनों के विरुद्ध दोनों देश एकजुट होंगे। हां, इसका संकेत कहीं भी नहीं है कि एकजुट कैसे होंगे और फिर क्या करेंगे?

इस समय सीरिया और इराक में 'इस्लामी राज्य' के खिलाफ अमेरिका बमबारी कर रहा है। पांच–छह मुस्लिम अरब राष्ट्र भी उसके साथ हो गए हैं। यदि अमेरिका यह आश्वासन दे कि वह अफगानिस्तान और पाकिस्तान के आतंकवादियों का भी सफाया करेगा तो भारत को उसका साथ देने पर विचार करना चाहिए। यह हमारी विदेश नीति का नया और मौलिक पैंतरा होता। इसमें पाकिस्तान को हमारे साथ आना पड़ता और उसके साथ–साथ ईरान, इराक और सीरिया के शिया लोग भी हमारे साथ होते। इसके अलावा इजरायल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू के साथ हुई मोदी की भेंट में चार चांद लग जाते। इस मुद्दे पर हमारे विदेश मंत्रालय को अभी भी गंभीरता से सोचना चाहिए। इसका सीधा संबंध अफगानिस्तान में भारत की भावी भूमिका से है।

मोदी ने अपनी इस अमेरिका यात्रा के दौरान यह सिद्ध कर दिया कि वे जनसंपर्क कला के महान कलाकार हैं और उन्होंने आशाओं के द्वार खोल दिए हैं। उनके द्वारा रोपे गए बीजों को सिंचित, पल्लवित और पुष्पित करने का काम वहां रहकर सुषमा स्वराज और अजित डोभाल ने किया। चीनी राष्ट्रपति की भारत यात्रा के निष्कर्ष भी कुछ इसी तरह के हैं। जापान के साथ ठोस उपलब्धियां हुई हैं, लेकिन अमेरिका और चीन जैसी महाशक्तियों के साथ थोड़ा धैर्य रखना पड़ेगा। विदेश नीति का हाल यही है। कभी वह सरपट दौड़ती है और कभी वह हर डग संभल–संभलकर भरती है। ❑

:: सूचना ::

स्वदेशी पत्रिका सम्राज्यवाद के खिलाफ एक सशक्त आवाज है। पत्रिका को ऐसे लोगों से प्रतिक्रियाएं, रिपोर्ट या आलेख की अपेक्षा है जो राष्ट्रहित में सोचते हैं और देश के स्वावलम्बन के लिए कुछ करने की इच्छा रखते है। जरूरी नहीं कि आप पत्रकार या लेखक ही हों, अपने आसपास से जुड़ी चीजों के प्रति आपकी संवदेना है और आप शब्दों में उसे लिख सकते है तो हमें अवश्य लिख भेजें। साथ ही स्वदेशी पत्रिका में छपे लेख आपको कैसे लगते हैं, क्या आप इसमें कुछ नए विषयों का समायोजन चाहते हैं कृपया हमें अवश्य अवगत कराएं। आपके विचारों को हम प्राथमिकता के साथ प्रकाशित करने का भी प्रयास करेंगे।

हमारा पता है :–

संपादक, स्वदेशी पत्रिका

'धर्मक्षेत्र', सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

स्वदेशी जागरण मंच (फरीदाबाद)

स्वदेशी का मतलब केवल वस्तुओं व सेवाओं से ही नहीं है। स्वदेशी का मतलब है देश को आत्मनिर्भर बनाने की प्रबल भावना, राष्ट्र की सार्वभौमिकता और स्वतंत्रता की रक्षा की भावना।

– सतीश कुमार

दिनांक 17 सितम्बर 2014 को स्वदेशी जागरण मंच की इकाई फरीदाबाद का महानगर स्वदेशी सम्मेलन' फरीदाबाद में सेक्टर 16 में पंजाबी भवन में आयोजित हुआ। जिसमें मंच के उत्तर एवं मध्य क्षेत्रीय संगठक श्री सतीश कुमार ने कहा कि किसी भी देश की प्रगति का पहला मापदंड है – सर्वसामान्य की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति और मूलभूत आवश्यकताएं होती हैं – रोटी, कपडा, मकान, शिक्षा व स्वास्थ्य। परन्तु दुर्भाग्य से आजादी के 67 वर्ष बाद भी हम इस मापदंड पर खरे नहीं उतर पाये हैं । जिसका एकमात्र कारण है स्वदेशी की भावना का विकसित न होना । किसी भी देश के सर्वांगीण विकास का मार्ग है स्वदेशी की भावना।

उन्होंने कहा कि स्वदेशी का मतलब केवल वस्तुओं व सेवाओं से ही नहीं है। स्वदेशी का मतलब है देश को आत्मनिर्भर बनाने की प्रबल भावना, राष्ट्र की सार्वभौमिकता और स्वतंत्रता की रक्षा की भावना। स्वदेशी की धारणा माने देश–भक्ति का आविष्कार है । हमारे व्यक्तिगत, सामाजिक व राष्ट्रीय जीवन के सभी कार्यों में कदम–कदम पर स्वदेशी की भावना का दर्शन होना चाहिए। प्रत्येक भारतीय वस्तु, अपनी भाषा, अपनी वेश–भूषा, अपने गीत–संगीत, अपनी संस्कृति, अपने त्यौहार, अपने पूर्वजों की गौरव गाथाओं आदि पर हमें गर्व होना चाहिए।

उन्होंने कहा कि विकास का यूरोपियन मॉडल व अमेरिकन मॉडल दोनों ही फेल हो चुके हैं । लेकिन भारतीय अर्थव्यवस्था हजारों वर्षों से चली आ रही है जो कभी फेल हो ही नहीं सकती क्योंकि भारतीयों के मानस में बचत की भावना विश्व में सर्वाधिक है।

श्री कमलजीत (दिल्ली व हरियाणा संगठक, स्व.जा.मंच) ने सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए कहा कि स्वदेशी एक विचार है, एक भाव है, एक आंदोलन है। महात्मा गांधी, बालगंगाधर तिलक आदि महापुरुषों ने भी स्वदेशी की भावना पर जोर दिया था , हमारे स्वतंत्रता सेनानियों ने विदेशी सामानों की होली तक जलाई थी। इसलिए यदि हमें अपने राष्ट्र को परम वैभव पर ले जाना है तो स्वदेशी के मार्ग पर चलना ही होगा । कार्यक्रम की अध्यक्षता एमराल्ड कान्वेंट स्कूल के चेयरमैन श्री सतीश चंदीला ने की। श्री चंदीला ने कहा कि हमारे देश में संसाधनों की कमी नहीं है बल्कि कमी है हमारे नीति–निर्माताओं में स्वदेशी की भावना की। स्वाभिमानी व समृद्ध भारत के निर्माण के लिए नीति–निर्धारण में स्वदेशी की भावना का होना अति आवश्यक है । उन्होंने कहा कि स्वदेशी के माध्यम से ही हम वास्तविक प्रगति के पथ पर अग्रसर हो पाएंगे।

दीप प्रज्ज्वलन के साथ कार्यक्रम का शुभारम्भ तथा वन्देमातरम गीत के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ । मंच संचालन विभाग संयोजक सतेंद्र सौरोत (स्वदेशी

जागरण मंच, फरीदाबाद) ने किया तथा मंच के युवा कार्यकर्ता राकेश चौधरी ने धन्यवाद प्रस्ताव प्रस्तुत किया। कार्यक्रम में शहर के सैकडों नागरिकों के अलावा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के जिला संघचालक श्री अजीत जैन, सह जिला संघचालक डा. अरविन्द सूद, विभाग कार्यवाह श्री गंगाशंकर मिश्र इत्यादि कार्यक्रम में उपस्थित रहे। ❑

पंडित दीनदयाल एवं महात्मा गाँधी के सपनों का भारत बनाना होगा

– देवेन्द्र विश्वकर्मा

25 सितम्बर से 2 अक्टूबर को स्वदेशी जागरण मंच (जबलपुर) द्वारा राष्ट्र जागरण, स्वदेशी सप्ताह के तहत गोष्ठी आयोजित हुई। गोष्ठी में सहसंयोजक एवं राष्ट्रीय कार्यकारिणी सदस्य देवेन्द्र विश्वकर्मा ने कहा जब तक ग्रामीण भारत आर्थिक रूप से मजबूत नहीं होगा तब तक भारत आर्थिक शक्तिशाली नहीं हो सकता।

उन्होंने कहा कि विदेशी निवेश के नाम पर जो बहुराष्ट्रीय कंपनियां भारत में आ रही हैं वह भारत के संसाधन का दुरुपयोग कर रही है। उनका उद्देश्य केवल अपना आर्थिक लाभ है। भारत की युवा शक्ति जो भारत की मानव शक्ति ऊर्जा है। वह सही नीति न होने के कारण बहुराष्ट्रीय कंपनियों के एजेंट के रूप में काम कर रही हैं। जिसके कारण हमारे लघु उद्योग अंतिम सांसें ले रहे हैं। जबकि दीनदयाल जी ने हर हाथ को काम और हर खेत को पानी की बात कही थी।

उन्होंने कहा – महात्मा गांधी ने कृषि आधारित उद्योगों को बढ़ावा देने की बात कही। इसलिए शक्तिशाली भारत के लिए हम सबको पंडित दीनदयाल उपाध्याय एवं महात्मा गांधी के सपनों का भारत बनाना होगा।

कार्यक्रम का संचालन रवि पटेल ने किया। कार्यक्रम में प्रदीप झारिया, राजेन्द्र ठाकुर, शंकर उपाध्याय, दीपक ठाकुर इत्यादि ने अपने विचार रखें। ❑

जीएम फसलों के विषय पर किसान विचार गोष्ठी

जीएम फसलों में टर्मिनेटर टेक्नोलॉजी अर्थात बांझ बीजों का उपयोग करने की दशा में, किसानों को उनकी फसल से बीज प्राप्त नहीं हो सकेगा जिससे किसान की आत्मनिर्भरता समाप्त हो जायेगी और हमारे किसानों को बीज के लिए भी विदेशी कंपनियों पर निर्भर रहना पड़ेगा। – डॉ. राजीव कुमार

स्वदेशी जागरण मंच, मुरादाबाद (पश्चिम उत्तर प्रदेश) के तत्वाधान में जी. एम. (जेनेटिकली मोडिफाईड) फसलों के विषय पर किसान विचार गोष्ठी का आयोजन 28 सितम्बर, 2014 को स्थानीय चित्रगुप्त इंटर कालिज के सभागार में हुआ। जिसमें सैंकड़ों किसानों शामिल हुए।

गोष्ठी में वक्ताओं ने जी.एम. फसलों से होने वाले दुष्प्रभावों पर चर्चा की तथा भारत में इसके परीक्षणों पर रोक लगाने की मांग की। गोष्ठी को संबोधित करते हुए स्वदेशी जागरण मंच के पश्चिमी उत्तर प्रदेश के संयोजक डॉ. राजीव कुमार ने कहा कि जी.एम. फसलों में टर्मिनेटर टेक्नोलॉजी अर्थात बांझ बीजों का उपयोग करने की दशा में, किसानों को उनकी फसल से बीज प्राप्त नहीं हो सकेगा जिससे किसान की आत्मनिर्भरता समाप्त हो जायेगी और हमारे किसानों को बीज के लिए भी विदेशी कंपनियों पर निर्भर रहना पड़ेगा।

गोष्ठी की विशेषता यह रही कि इसमें सभी किसान संगठन जिनमें भारतीय किसान संघ, भारतीय किसान यूनियन (टिकैत), भारतीय किसान मजदूर संगठन (वी.एम. सिंह) के प्रतिनिधियों ने भी प्रतिभाग किया और सबने एक स्वर में जी. एम. फसलों के सम्बन्ध में किसानों को जागरूप करने का संकल्प लिया। ❑

हमारा उद्देश्य है इस राष्ट्र का निर्माण करना, इस राष्ट्र को परम वैभव तक ले जाना। जब हम कहते हैं कि हम राष्ट्रवादी हैं, तो राष्ट्रवाद की कसौटी में राष्ट्र के उत्कर्ष की हमारी दृष्टि देश का सबसे छोटा आदमी जो सबसे गरीब, गयाबीता है, उसके उत्कर्ष को हम राष्ट्र का उत्कर्ष मानते हैं। राष्ट्र के उत्कर्ष की यही कसौटी है। – राष्ट्रऋषि दत्तोपंत ठेंगड़ी

दिनांक : 12 अक्टूबर 2014

घोषणा पत्र

स्वदेशी संगम

इन्दिरा गाँधी पंचायती राज संस्थान, जयपुर, राजस्थान

आज स्वदेशी संगम के अवसर पर, सर्वसमावेशी विकास की भारतीय अवधारणा के लिए संकल्पित देश भर से आए हम सभी जन संगठनो के प्रतिनिधि पूर्ण दायित्व बोध के साथ, सर्वसम्मति से, विगत 23 वर्षो से आर्थिक वैश्वीकरण के दौर में देश व समाज के सम्मुख उत्पन्न विभिन्न संकटो के प्रति अपनी चिन्ता व्यक्त करते हैं :

● कृषि, खुदरा व्यापार, पशुपालन, कुटीर व लघु उद्योग में संलग्न देश के बहुत बड़े वर्ग के लिए योगक्षेम व जीवनयापन उत्तरोत्तर कठिन व दूभर होता चला गया है। शिक्षा एवं स्वास्थ्य के महंगे होते चले जाने के कारण आमजन का जीवन संकटमय होता जा रहा है। गाँवों से शहरों की ओर बढ़ता पलायन समस्या को गम्भीरतर बना रहा है। इस दिशा में परिवर्तन आवश्यक है।

● मध्यम व बड़े उद्योगो के क्षेत्र में भी विदेशी पूंजी के बढते प्रभाव के कारण देश के उत्पादन तन्त्र का बहुत बड़ा भाग उद्यमबन्दी या विदेशी अधिग्रहण का शिकार हो गया है और आयात उदारीकरण के कारण देश विदेशी वस्तुओं के बाजार के अधीन हो गया है।

● पर्यावरण असंतुलन व पारिस्थितिकी की अनदेखी के कारण हमारे जलस्रोत, वायुमण्डल, मिट्टी आदि तेजी से प्रदूषित होने के साथ ही वातावरण के बढते तापमान, प्राकृतिक संसाधनों के विलोपन आदि के गम्भीर संकट उत्पन्न हो रहे हैं और देश के पशुधन का क्षरण बढ़ रहा है।

● ऐसे में अब ळड फसलों के खुले परीक्षण और नये–नये क्षेत्रों में विदेशी निवेश को आमन्त्रण जैसी कई आसन्न चुनौतियाँ संकटो के एक नये दौर को जन्म देंगी।

● देश के सम्मुख विद्यमान संकटों यथा कृषि योग्य भूमि का बढ़ता अधिग्रहण, बीजों पर विदेशी कंपनियों का बढ़ता कब्जा, पेटेंट कानूनों मे बदलाव की आहट, कृषि व औद्योगिक उत्पादन में गतिरोध, किसानो, बुनकरो व अन्य हस्तशिल्पयों में आत्महत्याओं का अन्तहीन दौर, असन्तुलित रसायनिक कृषि से भूमि का बंजर होते चले जाना, परिवहन विद्युत जनन व वितरण व ऐसी ही आधारित रचनाओं के अभाव जैसी समस्याओं का समाधान नये क्षेत्रों में विदेशी निवेश, विदेशी निवेशकों को उदार शर्तो पर आमन्त्रण, भौतिक संपदा के संरक्षण के नाम पर विदेशी कम्पनियों को एकाधिकार प्रदान करने के प्रयास और सार्वजनिक निजी भागीदारी (PPP) के माध्यम से सार्वजनिक संसाधनो को निजी लाभार्जन हेतु देने जैसे वाशिंगटन सहमति जैसे अप्रचलित हो चुके नीति प्रस्तावों से संभव नहीं है।

एतदर्थ, आज यहाँ जयपुर में स्वदेशी संगम के इस समारोप सत्र में हम उद्घोषित करते हैं कि, अब देश व समाज, आर्थिक वैश्वीकरण से आम व्यक्ति के योगक्षेम पर होने वाल आघातों को अधिक समय तक सहन करने को तैयार नहीं है। सर्वसमावेशी, सतत् एवं सन्तुलित विकास के लिए, सम्पूर्ण देशवासियों ने 'एक मन और एक मस्तिष्क' का होने का परिचय देते हुए तीन दशक बाद एक प्रबल जनादेश वर्तमान नयी सरकार को प्रदान किया है। ऐसे उदय काल की बेला में हम स्पष्ट शब्दों में इन जन भावनाओं को निम्न शब्दों में उद्घोषित करते हैं :–

1. कृषि, खुदरा व्यापार और कुटीर, सूक्ष्म एवं लघुउद्योगों के संवर्धन व विकास के लिए अविलम्ब प्रभावपूर्ण प्रयत्न प्रारम्भ किये जाएँ। अनावश्यक एवं बेलगाम आयातों पर अंकुश लगाते हुए देश के विकेन्द्रित उत्पादन तन्त्र का सशक्तिकरण करते हुए, विदेशी निवेश पर आधारित उत्पादन की नीति के स्थान पर देश में अनुसंधान व विकास (आर एण्ड डी) के माध्यम से वांछित प्रौद्योगिकी के विकास से भारतीय उत्पादों एवं ब्राण्डों के देश–विदेश में स्थापित करते हुए MADE BY INDIA को राष्ट्रीय ध्येय के रूप में क्रियान्वित किया जाए। विकास के सम्पूर्ण प्रयास धारणक्षम विकास (Sustainble Development) अवधारणा पर केन्द्रित होने आवश्यक हैं।

स्वदेशी संगम देश की जनता से आह्वान करता है कि :–

1. वैश्वीकरण की 23 वर्षो से चल रही जनविरोधी नीतियों के विरूद्ध एक जुट होकर इनका डट कर विरोध करे।
2. अपने जीवन में स्वदेशी के व्रत का पालन का संकल्प ले।

स्वदेशी संगम देश को आत्मनिर्भर व स्वावलंबी बनाने के कार्य में संलग्न सभी संस्थाओं से अपील करता है कि देश की आर्थिक स्वतंत्रता व संप्रुभता के रक्षार्थ वे एक मंच पर आकर विदेशी पूंजी के वर्चस्व के खिलाफ एकजुट हों।

भारत माता की जय।